# एम.ए. (हिंदी)

## सत्र - III (CBCS)

## प्रश्न पत्र क्र.१२.३

# मराठी संतों का हिंदी काव्य

## (Hindi Poetry of Marathi Saints)

## विषय कोड :99496

© UNIVERSITY OF MUMBAI

**प्राध्यापक सुहास पेडणेकर**
कुलगुरू,
मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

**प्राध्यापक रविंद्र द. कुलकर्णी**
प्र-कुलगुरु,
मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

**प्राध्यापक प्रकाश महानवार**
संचालक,
दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

**कार्यक्रम समन्वयक** : **श्री. अनिल आर. बनकर**
सहयोगी प्राध्यापक इतिहास एवं कला शाखा प्रमुख,
दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

**अभ्यास समन्वयक एवं लेखक** : **डॉ. संध्या शि. गर्जे**
सहायक प्राध्यापक,
दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ
सांताक्रुझ (पू), मुंबई - ४०० ०९८

**संपादक** : **प्रा. अनिल गो. चौधरी**
सहायक प्राध्यापक,
दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ,
सांताक्रुझ (पू), मुंबई - ४०० ०९८

**लेखक** : **डॉ. प्रकाश धुमाळ**
सहयोगी प्राध्यापक,
जनसेवा शिक्षण मंडळ, शांताराम भाऊ घोलप कला,
विज्ञान आणि वाणिज्य महाविद्यालय, शिवळे,
ता. मुरबाड, जि.ठाणे

**मे २०२२, मुद्रण - १**

**प्रकाशक** : संचालक, दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ,
विद्यानगरी, मुंबई -४०० ०९८.

**अक्षर जुळणी व मुद्रण** : मुंबई विद्यापीठ मुद्रणालय,
विद्यानगरी, सांताक्रुझ (पू), मुंबई

## अनुक्रमणिका


| क्रमांक | अध्याय | पृष्ठ क्रमांक |
|---|---|---|
| १. | सन्त नामदेव | ०१ |
| २. | वारकारी सम्प्रदाय : अवधारणा एवं स्वरूप | ११ |
| ३. | सन्त नामदेव की सामाजिक चेतना (समाज दर्शन) | २१ |
| ४. | सन्त नामदेव की दार्शनिक विचारधारा (दर्शन) | ३२ |
| ५. | सन्त नामदेव की भक्ति भावना | ४२ |
| ६. | संत तुकाराम व्यक्तित्व और कृतित्व | ५३ |
| ७. | सन्त तुकाराम की विठ्ठल भक्ति | ६२ |
| ८. | सन्त तुकाराम के काव्य में सामाजिक बोध | ७६ |
| ९. | तुकाराम गाथा प्रेरणादायी स्त्रोत | ८४ |


❖❖❖❖

# Semester - III (तृतीय सत्र)
# Course Code : PAHIN 112.3

(अंतः अनुशासनिक अध्ययन)

प्रश्न पत्र -१२.३

## मराठी संतों का हिंदी काव्य
## (Hindi Poetry of Marathi Saints)

कुल श्रेयांक **(Credit)= 6**

पाठ्य पुस्तकें :

**इकाई एक और दो** **श्रेयांक - ३**

१. **संत नामदेव की हिन्दी पदावली** - संपा. डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. राजनारायण मौर्य

**प्रकाशक- हिन्दी विभाग पुणे विश्वविद्यालय, पुणे- 411007**

**(पद संख्या - ०१, ०३, ०९, १२, १५, १८, १९, २३, ३२, ४२, ४८, ५१, ६४, ६५, ७४, ७६,९२, ९६, ९७, १०५ ) कुल = २० पद**

**इकाई तीन और चार** **श्रेयांक -३**

२. **तुकाराम पदावली** - प्रा. वेदकुमार 'वेदांलकार'

विकास प्रकाशन, उस्मानाबाद

**(पद संख्या -९, ३६ ,५१, ६०, ७० ,८५, १०८, ११४ , १५१, १६४, १९६, २०१, २०३, २७८, २९३, ३०२, ३३३, ३७९, ४१७, ४४६) कुल = २० पद**

**संदर्भ ग्रंथ : (प्रश्न पत्र -१२.३)**


१. संत नामदेव और हिंदी पद साहित्य - डॉ. रामचंद्र मिश्र
२. हिंदी निर्गुण काव्य का प्रारंभ और संत नामदेव की कविता - डॉ. शं. के. आडकर
३. हिंदी और मराठी वैष्णव संत साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन - डॉ. न. चिं. जोगळेकर
४. हिंदी और मराठी का निर्गुण संत काव्य - डॉ. प्रभाकर माचवे
५. मराठी का भक्ति साहित्य - डॉ. भी. गो. देशपांडे
६. मराठी संतों का सामाजिक कार्य - डॉ. वि. भा. कोलते
७. मराठी संतों की हिंदी वाणी - संपा. डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित
८. मराठी संत काव्याची सामाजिक फलश्रुति - श्री. गं.बा. सरदार
९. पाँच संत कवि - श्री. शं. गो. तुळपुळे
१०. मराठी संतों की हिंदी वाणी - डॉ. यु. म. पठाण
११. महाराष्ट्र के नाथपंथी कवियों का हिंदी काव्य - डॉ. अशोक कामत
१२. महाराष्ट्र के प्रमुख साधना संप्रदाय - डॉ. र. वा. बिवलकर
१३. हिन्दी के विकास में मराठी संतों का योगदान - डॉ. सी. एल. प्रभ

# १

# सन्त नामदेव

**इकाई की रूपरेखा**

इकाई का उद्देश

१.0 प्रस्तावना

१.१ सन्त नामदेव का व्यक्तित्व

१.१.१ सन्त नामदेव की जन्मतिथी

१.१.२ सन्त नामदेव का जन्म स्थान

१.१.३ सन्त नामदेव के माता-पिता एवं परिवार

१.१.४ सन्त नामदेव की जाति तथा व्यवसाय

१.१.५ सन्त नामदेव का बाल्य काल

१.१.६ सन्त नामदेव के गुरु

१.१.७ सन्त नामदेव की यात्राएँ

१.१.८ सन्त नामदेव की समाधि

१.२ सन्त नामदेव की रचनाएँ

१.३ सारांश

१.४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१.६ सन्दर्भ ग्रन्थ

**इकाई का उद्देश्य**

इस इकाई के अन्तर्गत सम्मिलित की गई विषय वस्तु के अध्ययन से अध्ययन कर्ता को निम्नलिखित जन्मकारियाँ देने का उद्देश्य निहित हैं|

अ) सन्त नामदेव के व्यक्तित्व की जानकारी देना |

आ) सन्त नामदेव की रचनाओं से परिचय करना |

## १.0 प्रस्तावना

हमारा भारत देश संतो एवं भक्तों की भूमि रहा हैं | मध्यकालीन अधिकतर संतो, भक्तों या साहित्याकारों के सम्बन्ध में हमारी जानकारी अत्यन्त सीमित हैं | इसके मूल में कई कारण बताये जाते हैं | एक तो इनका वैराग्यभाव, या सांसारिक उदासिनता, विनम्रता से उपजा

आत्मश्लाघा का अभाव तत्कालीन शिष्टाचार का अंग था | फलत: ऐसी स्थिती में इन संतो की जानकारी का मर्यादित रहना स्वाभाविक हैं | फलत: संतो की जीवनगाथा (चरित) के परिज्ञान का स्त्रोत लोकजीवन में प्रचलित जनश्रुतिया और किवदन्तियाँ रही हैं|

यही कारण है कि अधिकतर संतो के जन्म और मृत्यू के समय और स्थान सम्बन्धी (ऐतिहासिक और भौगोलिक अनिश्चितता प्राप्त सूचनाओं की पूर्वाग्रहदुषितता या निष्पक्षता वैज्ञानिक निष्कर्ष का अभाव, काल्पनिक अनुमान एवं सांप्रदायिक तथा व्यक्तिगत बल आदि से सत्य का क्षत-विक्षत स्पष्टीकरण मिलता हैं | ऐसा होते हुए भी सन्त कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्व के विषय में कई विद्वानों द्वारा शोधपरक एवं विश्लेषणात्मक दृष्टि से पर्याप्त कार्य हुआ हैं |

## १.१ सन्त नामदेव का व्यक्तित्व

जनश्रुतियाँ, विभिन्न विद्वानों द्वारा हुए शोध एवं विश्लेषणात्मक लेखों के सहारे सन्त नामदेव के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला जा सकता हैं |

नामदेव के समकालीन संतो ने उनका जो परिचय दिया हैं | उनको कहाँ तक ग्राह्य अथवा अग्राह्य समझा जाय यह भी एक समस्या हैं | अत: नामदेव विषयक उपलब्ध सभी सामग्री का अध्ययन और विश्लेषणकर उनका जीवन चरित्र प्रस्तुत करने का हमारा विनम्र प्रयास हैं |

### १.१.१ सन्त नामदेव की जन्म-तिथी

सन्त नामदेव के जन्मकाल के सम्बन्ध में अनेक मत प्रचलित हैं | कुछ लोग इनका जन्म तेरह शताब्दी में मानते हैं, तो कुछ लोग चौदहवी शताब्दी में | स्वयं नामदेव रचित अभंग के अनुसार इनका जन्म शके ११९२ कार्तिक शुक्ल पक्ष रविवार के दिन (२६ अक्तूबर ई.स. १२७० में) हुआ था | इस मत का समर्थन डॉ. रानडे, श्री. पांगावकर तथा डॉ. तुलपुले भी करते हैं | जो मराठी के प्रसिद्ध विद्वान हैं | हिंदी के विद्वान आ. रामचंद्र शुक्ल, मिश्रबंधु , डॉ. पितांबरदत्त बडथ्वाल, डॉ. विनयमोहन शर्मा, डॉ. भगीरथ मिश्र एवं डॉ. राजनारायण मौर्य, डॉ. प्रभाकर पंडित, डॉ. श.के आडकर, भी नामदेव जन्म शके 1992 अर्थात ई.स. १२७० स्वीकार करते हैं| डॉ. मोहनसिंह दीवान के अनुसार नामदेव का जन्मकाल सन १३९० हैं | डॉ. मोहनसिंह, प्रो. वासुदेव बळवंत पटवर्धन आदि विद्वानों ने भाषा के आधार पर नामदेव का काल लगभग ई.स. १३७० से १४५० माना हैं | गार्स द तासी ने नामदेव का जन्मकाल सन १२७८ माना जो आधार हीन हैं | पंजाबी परम्परा में नामदेव के जन्मकाल की दो तिथियाँ दी हैं – सन १३६३ एवं सन १३७० हैं जिसका कोई ठोस आधार नहीं हैं |

मराठी में सन्त नामदेव के चरित्र से सम्बन्धित सबसे सटीक प्रामाणिक और तर्क संगत रचना डॉ. शा. गो. तुलपूले की हैं | इनकी यह रचना पाँच सन्त कवि नाम से प्रकाशित हैं, जिसमे ज्ञानेश्वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम और रामदास के विषय में लिखा गया हैं | विद्वान लेखक ने नामदेव के चरित्र सम्बन्धी सभी वादों पर संक्षेप में विश्लेषणात्मक निर्णय उपस्थित किया हैं | यह निर्णय प्रामाणिक ग्रंथों तर्कों एवं संदर्भों पर आधारित हैं | उन्होनें

नामदेव की जन्मतिथी सन १२७० ई स्वीकार की हैं | जो लगभग सभी विद्वानों द्वारा स्वीकृत हैं |

### १.१.२ सन्त नामदेव का जन्म-स्थान

जन्मकाल की ही तरह नामदेव के जन्मस्थान के सम्बन्ध में भी विद्वानों में एकमत नही हैं | नामदेव के जन्मस्थान के सम्बन्ध में जो मत प्रचलित हैं वो इस प्रकार हैं–

अ) हिन्दी में नामदेव का सर्वप्रथम चरित्र लिखनेवाले परिचयकार अनंतदास ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ में श्री. नामदेव का जन्मस्थान पंढरपुर माना हैं | मराठी भक्त विजय के लेखक महिपति ने स्पष्ट रूप से पंढरपूर का नाम नही दिया हैं | परंतु पत्र में लिखा है की चन्द्रभागा नदी में स्नान कर दामासेठ और गोणाई पंढरी की पुजा करने जाते थे | इससे यह स्पष्ट होता हैं कि वे पंढरपूर में ही रहते थे |

आ) नामदेव ने स्वयं अपने एक अभंग में अपने पिता को नरसी बामनी गाँव का दर्जी बतलाया हैं| पर यह नरसी बामनी गाँव महाराष्ट्र में कहाँ हैं इस पर विद्वानों में मतैक्य नहीं हैं | डॉ. भ. आरकार नरसी बामनी गाँव कोसातारा जिले में कराड के समीप स्थित बतलाते हैं जो अब भये नरसिंगपूर या कोले नरसिंगपूर के नाम से जाना जाता हैं | मराठी के कुछ विद्वान श्री. माधवराव अप्पाजी मुले पांडुरंग शर्मा तथा हिन्दी के लगभग सभी लेखक – आ. रामचंद्र शुक्ल डॉ,रामकुमार वर्मा, आचार्य विनयमोहन शर्मा, श्री. परशुराम चतुर्वेदी, डॉ. भगीरथ मिश्र एवं राजनारायण मौर्य आदि तथा अंग्रेजी विद्वान श्री. मेकॉलिक भी इसी मत से सहमत हैं | पंजाबी परंपरा में भी यही जन्मस्थान प्रचलित हैं |

इ) मराठी के अधिकतर विद्वान नरसी बामनी गाँव मराठवाडा के परभणी जिले में हैं | ई.स.१९२६ तक नरसी बामनी सातारा जिले में माना जाता था | १९२६ ई.में. भारत इतिहास संशोधन मंण्डल पत्रिका में श्री केशव राम कोरटकर का लेख छपा उसमें नरसी बामनी परभणी में हैं तब से लगभग सभी विद्वान परभणी के नरसी बामनी को नामदेव का जन्मस्थान मानते हैं | श्री. ज.र.आजगावकर, श्री. पारगावकर, श्री. भावे तथा श्री तुलपुले आदि विद्वान इसी मत को मानते हैं |

ई) डॉ.भगीरथ मिश्र जी ने स्पष्टत: लिखा है कि नामदेव का जन्म कराड के नरसी बामणी गाँव में हुआ था उनके जन्म के कुछ ही दिन पश्चात उनके माँ-बाप पंढरपूर जाकर रहने लगे थे | डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित भी नरसी बामणी गाँव को कराड के पास मानने के पक्ष में हैं| वे स्पष्टत: लिखते हैं- यों तो कराड के पास नरसी बामणी में उनके पूर्वज की समाधि भी हैं और इससे उनका मूलस्थान वहाँ अधिक सिद्ध हो सकता है | अत: इससे निश्चित होता है कि नामदेव का जन्म कराड के नरसी बामणी गाँव में ही हुआ था और कुछ ही दिन पश्चात उनके माँ-बाप पंढरपूर जा कर रहने लगे थे |

### १.१.३ सन्त नामदेव के माता-पिता एवं परिवार

१) हिन्दी मराठी तथा अंग्रेजी के लगभग सभी विद्वान यही मानते हैं कि नामदेव की माता का नाम गौणाई और पिता का नाम दामा सेठ था | पंजाबी परम्परा के अनुसार भी नामदेव के माता-पिता यही हैं | जनाबाई के अभंग में यह स्पष्ट उल्लेख हैं कि गौणाई और दामासेठ ने

एक पुत्र के लिये प्रभू से याचना की तदनंतर उनकी प्रार्थना फलवती हुई और नामदेव का जन्म हुआ | नामदेव को एक बहन भी थी जिसका नाम आऊबाई था | नामदेव का विवाह नौ वर्ष की अवस्था में राजाई नामक स्त्री से हुआ था | नामदेव के चार पुत्र और एक पुत्री थी | जनाबाई के अनुसार नामदेव के परिवार में कुल पंद्रह सदस्य थे –

१ ) दामा सेठ - नामदेव के पिता

२ ) गोणाई - नामदेव की माता

३ ) आऊताई - नामदेव की बहन

४ ) नामदेव - दामा सेठ एवं गोणाई का बेटा

५ ) राजाई - नामदेव की पत्नी

६ ) नारा - नामदेव का ज्येष्ठ पुत्र

७ ) लाडाई - नारा की पत्नी

८ ) विठा - नामदेव का दूसरा पुत्र

९ ) गोड़ाई - विठा की पत्नी

१० ) गोंदा - नामदेव का तिसरा बेटा

११) येसाई (विसाई) - गोंदा की पत्नी

१२) महादा - नामदेव का चौथा बेटा

१३) साखराई – महादा की पत्नी

१४) लिम्बाई - नामदेव की बेटी

१५) जनाबाई – नामदेव के घर की दासी

### १.१.४ सन्त नामदेव की जाति तथा व्यवसाय

प्राचीन वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत हर एक व्यक्ति का व्यवसाय उसकी जाति पर ही निर्भर होता था | नामदेव के माता - पिता कपडे बेचने का व्यापार करते थे | प्रारम्भ में वे कपडे सीते थे अर्थात दर्जी का काम करते थे | इसीलिए वे दर्जी (शिंपी) कहे जाते थे | मराठी अभंगो और हिन्दी पदों में कई स्थान पर उन्होंने अपनी जाति तथा व्यवसाय का वर्णन भी किया हैं |

'शिम्पियाचे कुली जन्म मज झाला|' अर्थात दर्जी के कुल में मेरा जन्म हुआ | प्रारम्भ में इनके माँ-बाप इन्हे घर के व्यवसाय में लगाना चाहते थे पर नामदेव का मन नहीं लगा | माता गोणाई को आपत्ति थी कि नामदेव अपने पैतृक व्यवसाय की ओर ध्यान नही देता –

“शिवण्या टिपण्या त्वां घातले पाणी|

न पाहसी परतोनि घराकडे||”

उन्होंने विठ्ठल के समक्ष आकर कई बार नामदेव की शिकायते की पर विठ्ठल के रंग में रंगा हुआ नामदेव का मन संसार में नहीं रमा | वे विठ्ठल के समक्ष करताल बजाकर नाचते हुए अभंग गाते थे –

“मन मेरे गजू जिव्हा मेरी काती|

मपि मपि काटअ जम की फाँसी||”

अर्थात मेरा मन गज हैं और जिव्हा कैंची| दोनों की सहायता से मैं यम का बन्धन काटता हूँ|

### १.१.५ सन्त नामदेव का बाल्य काल –

सन्त नामदेव की बाल्यावस्था के सम्बन्ध में अनेक चमत्कारिक तथा असाधारण घटनाएँ प्रसिद्ध हैं | कोई उन्हें उद्धव का अवतार मानता हैं, कोई विश्व भगवान का और कोई सन्तकुमार का | नामदेव जब दो वर्ष के हुए तभी उनके मुख से विठ्ठल का नाम बार बार उच्चारित होने लगा | पाँच वर्ष की अवस्था में दामासेठ ने नामदेव को विद्यालय में प्रविष्ट करा दिया | पर वहाँ लिखने पढने के बदले वे ‘श्री विठ्ठल श्री विठ्ठल’ करते रहे| सात वर्ष की अवस्था से ही वे पत्थर के टुकडों की मंजीरा बना कर उसे बजाने और विठ्ठल का भजन करने लगे | कभी कभी श्री पंढरीनाथ विठ्ठल स्वयं नामदेव के साथ भजन करते थे | कहा जाता हैं कि नामदेव ने अपने हाथ से विठ्ठल को दूध पिलाया था और नैवेद्य (भोग) खिलाया था | तब नामदेव की आयु आठ वर्ष की थी | नौ वर्ष की अवस्था में नामदेव का विवाह राजाई नामक लडकी से हुआ था, किन्तु नामदेव का मन गृहस्थी के कार्यों में बिलकुल नहीं लगता था | वे रात दिन विठ्ठल मूर्ति के सामने भजन करते थे | उन्हें भाववेश में जाने और नाचने में अद्भुत आनन्द प्राप्त होता था |

### १.१.६ सन्त नामदेव के गुरु

नामदेव के गुरु कौन थे एस सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतभेद हैं | इनके गुरु के रूप में तीन व्यक्तियों का उल्लेख मिलता हैं | सन्त ज्ञानेश्वर, विसोबा खेचर और सोपानदेव | यह निर्णय लेने से पूर्व की सन्त नामदेव की वास्तविक गुरु इनमे से कौन हैं यहाँ उनके गुरु करने के सम्बन्ध में प्रसिद्ध घटना का उल्लेख करना आवश्यक हैं | ज्ञानेश्वर और उनके भाई बहन नामदेव की भक्ति के विषय में सून चुके थे | और ज्ञानेश्वर की कीर्ती भी नामदेव के कानो तक पहुँची थी | एक बार आलंन्दी में नामदेव की ज्ञानेश्वर तथा उनके भाई बहन से भेट हुई | पंढरी में भावूक भक्त नामदेव को देखकर ज्ञानेश्वर और निवृत्तिनाथ उनके चरणों पर गिर पडे, लेकिन नामदेव भक्ति के अहंकार में वैसे ही खडे रहे | उन्होने उनकी वंदना भी नहीं की| यह बात मुक्ताई के ध्यान में आई| मुक्ताबाई स्पष्ट वक्ता थी | उन्होने कहा नामदेव तुझे विठ्ठल का समोच्च अखंड रूप से प्राप्त हैं, परब्रम्ह के साथ तु खेल खेलता हैं, पर तेरा अभिमान नहीं गया, ज्ञान की आँख नहीं खुली | “तद नंतर’ सन्तो में ज्येष्ठ गोरोबा काका को कहा – “काका! जरा इनकी परीक्षा करो की यह घडा कच्चा हैं या पक्का |” गोरोबा ने अपने दुलार

से नामदेव के सिर पर हाथ फेर  कर कहा – "यह कच्चा घडा हैं| निगुरा कही पक्का हो सकता हैं |" यह सुनकर नामदेव को बहुत ग्लानि हुई और वे तुरंत पंढरपूर चले गये |

इस प्रसंग से नामदेव के हृदय को बहुत बडा आघात हुआ | उनके मन में गुरु करणे की भावना दृढ हो गई| वे गुरु की खोज में निकाल पडे | अवंढा नागनाथ के मंदिर में इनकी भेट विसोबा खेचर से हुई| विसोबा खेचर वहाँ शिवलिंग के ऊपर अपना कुष्टयुक्त पैर रखकर लेटे हुए थे| यह देखकर नामदेव को बहुत क्रोध हुआ और उसने विसोबा से कहा – 'मूर्ख! तु शिवजी के ऊपर अपना पैर रखकर सो रहा हैं?" विसोबा खेचर ने कहा – "भाई मै तो बीमार हूँ| मेरे पैर को उठाकर जरा वहाँ पर रख दो, जहाँ शिवलिंग नहीं हैं |" नामदेव ने उनका पैर उठाकर दुसरी तरफ दिया लेकीन नामदेव को यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ की वहाँ भी उनके पैर के नीचे शिवलिंग हैं| इस प्रकार जहाँ जहाँ नामदेव उनका पैर रखते वहाँ-वहाँ शिवलिंग रहता| यह चमत्कार देखकर नामदेव ने विसोबा खेचर के पैरों पर गिरकर क्षमा माँगी और उन्हें अपना गुरु बनाया | अत: इस घटना से स्पष्ट हैं की विसोबा खेचर ही नामदेव के गुरु थे|

कुछ लोग सन्त ज्ञानेश्वर को नामदेव का गुरु कहते हैं, क्योंकि सन्त नामदेव ने ज्ञानेश्वर का नाम बडी श्रद्धा के साथ लिया हैं | परन्तु ज्ञानेश्वर इनके दीक्षा गुरु नही थे | यह बात अवश्य हैं कि ज्ञानेश्वर के सम्पर्क से नामदेव में बहुत बडा परिवर्तन हुआ था | अत: जीवन में इतना बडा क्रांतिकारी परिवर्तन करने वाले सन्त ज्ञानेश्वर को यदि नामदेव ने गुरु की भाँति ही श्रद्धा प्रदान की हो तो यह कोई अस्वाभाविक बात नहीं हैं |

नामदेव की समसामायिक कवयित्री सन्त जनाबाई एक स्थान पर सोपान देव का नामदेव के गुरु होने का उल्लेख किया हैं | पर यह केवल जनाबाई की श्रद्धा की वाणी हैं, इसमे तथ्य नहीं हैं| अत: नामदेव के दीक्षा गुरु विसोबा खेचर ही थे, इसमे कोई सन्देह नहीं हैं |

### १.१.७ सन्त नामदेव की यात्राएँ

एक विठ्ठल भक्ति के रूप में नामदेव कि कीर्ति दुर तक फैली हुई थी | उनका यश एवं कीर्ति सुनकर आलंन्दीके ज्ञानेश्वर उनके पास आये और यात्रा पर चलने का उनसे अनुरोध किया | नामदेव पंढरपूर छोडना नहीं चाहते थे किन्तु सन्त ज्ञानेश्वर के सहवास का लाभ उठाने के लिये वे उनके साथ जाने के लिये तैयार हुए | उन्होने सन्त ज्ञानेश्वर के साथ उत्तर भारत के तीर्थ स्थानों की यात्रा की | यह उनकी पहली यात्रा थी, जिसका बडा ही हृदयग्राही वर्णन सन्त नामदेव ने अपने 'तीर्थवली के अभंगो में किया हैं |

इस यात्रा से लौटकर आने के पश्चात सन्त ज्ञानेश्वर ने ई.स.१२६९ में (शके १२१८) आलंन्दी में समाधि ले ली | अपने गुरु तुल्य परम मित्र के वियोग का नामदेव को अपार दु:ख हुआ| वे पंढरपूर में गये लेकिन उनका मन पंढरपूर से कुछ उचट सा गया | वे अकेले ही पंढरपूर से निकले और घुमते घुमते पंजाब पहुँचे यह उनकी दुसरी यात्रा थी | पंजाब के गुरुदासपुर जिले के भटकल गाँव में एक तालाब के किनारे वे रहने लगे | उनके शिष्य लाधा और जल्ला ने वही इनसे दीक्षा ली | भटकल का वह तालाब आज भी नामियाना नाम से प्रसिद्ध हैं | कुछ दिनो के पश्चात वे एक रकाना स्थान पर चले गये| और वही भजन करने

लगे, किन्तु वहाँ धीरे धीरे लोग आने लगे | कुछ दिनो में वहाँ एक गाँव बस गया जो घुमान कहलाता हैं | यही पर नामदेव ने हिन्दी पदों की रचना की हैं |

### १.१.८ सन्त नामदेव की समाधि

सर्वसाधारण मनुष्य की तरह उमर पुरी होने पर स्वाभाविक रीति से नामदेव की मृत्यू हो गयी थी, ऐसा किसी नहीं कहा हैं | नामदेव – भक्तों का विश्वास हैं कि जिस प्रकार सन्त ज्ञानेश्वर ने समाधि ली उसी प्रकार नामदेव भी समाधिस्थ हुए |

नामदेव की समाधि को लेकर तीन स्थलों का उल्लेख किया जाता हैं– घुमान की समाधि नरसी की समाधि और पंढरपूर की समाधि पंजाब के घुमान में स्थित नामदेव की समाधि के बारे में एक विचित्र कथा प्रचलित हैं| नामदेव अपना भौतिक शरीर घुमान में छोडकर सुरत स्वरूप पंढरपूर चले गये और वहाँ समाधिस्थ हुए | घुमान के मंदिर में उनके शरीर पर चादर डाल दी गई थी | उन्होंने अपने शिष्यों से कहा था की यह भेद किसी को ज्ञात न हो | तीन दिन के पश्चात शिष्यों ने देखा कि वे पहले ही कालवश हो गये थे | उन्होंने उनकी अंत्य क्रिया की और समाधि भी बनवाई |

केशवराव कोरटकर नामदेव की समाधि नरसी में मानते हैं | नरसी मराठवाडा के परभणी जिले में हैं | नरसी गाँव से दो छलांग की दूरी पर कयाध नदी के किनारे नामदेव की समाधि हैं | वहाँ एक छोटा सा मंदिर भी हैं जहाँ फाल्गुन वद्य एकादशी (ग्यारहवें दिन) को मेला लगता हैं| लेकिन स्वयं कोरटकर को अपनी जानकारी के विश्वसनीय होने में सन्देह हैं |

नामदेव के शिष्य परिक्षा भागवत के एक अभंग के आधार पर सन १३५० ई.स. पंढरपूर में ही नामदेव की समाधि लेने की बात पुष्ट होती हैं | अभंग इस प्रकार हैं–

'आषाढ शुक्ल एकादशी| नामा विनवी विठ्ठलासी|

आज्ञा व्हावी ही मजसी| समाधि विश्रांति जागी ||'

प्रिन्सिपल शं. वा. दाण्डेकर के अनुसार नामदेव की समाधि पंढरपूर में विठ्ठल के महाद्वार के पास हैं | उन्होंने आषाढ वद्य १३ शके १२७२ को समाधि ली| नामदेव ने अपने एक अभंग में स्वयं को सीढी का पत्थर कहा हैं| इस सीढी के पत्थर को संतो के चरणों का स्पर्श होने सेव उनका उद्धार होगा –

"नामा म्हणे आम्ही पायरिचे चिरे| सन्त पाय हिरे देती बरी| श्री दावडेकर का मत हैं कि नामदेव ने सपरिवार समाधि ली | उनकी पुत्रवधू लाडाई गर्भवती होने के कारण मायके गई थी| वह अकेली पीछे रह गई |

नामदेव के समाधि स्थानों के बारे में अपना निष्कर्ष देते हुए, डॉ. भगीरथ मिश्र ने लिखा हैं- 'उक्त स्थानों (नरसी और पंढरपूर) और घटनाओं में से किसी एक हक को भी सत्य मानने के लिये ऐतिहासिक प्रमाण नहीं हैं | पर यह बात ठीक लगती हैं कि उन्होंने समाधि घुमान में ली होगी | इसके लिये पहली बात यह हैं कि महाराष्ट्र में सन्त नामदेव के अंतिम काल का विवरण नहीं प्राप्त होता | दूसरी बात यह हैं कि जब नामदेव अपने जीवन के अंतिम दिनों में लगभग वीस वर्ष तक घुमान में रहे तो समाधि लेने के लिये पंढरपूर में आये हो यह बात

संगत नहीं लगती | अधिक संभव हैं कि नामदेव ने घुमान में ही समाधि ली थी | उनका कोई शिष्य अस्थी या फूल लेकर पंढरपूर आया होगा और नामदेव की भक्ति के अनुसार विठ्ठल मन्दिर के महाद्वार पर रख दिया होगा | उस स्थान पर बाद में समाधि बनाई गायी हैं | हमे भी डॉ. मिश्र जी का निष्कर्ष समीचीन लगता हैं |

## १.२ सन्त नामदेव की रचनाएँ

सन्त नामदेव अत्यन्त संवेदनशील हृदय लेकर इस संसार में अवतारित हुए थे | उन्होंने अपने जीवन में सौ करोड रचना करने की प्रतिज्ञा की थी |

'शत कोटी तुझे करीन अभंग| म्हणे पांडुरंग ऐक नाम्या||'

यह अतिशयोक्ति जान पडती हैं, पर निश्चय ही नामदेव के अभंगो (पदों) की संख्या पर्याप्त रही होगी लेकिन समय के प्रवाह में अधिकतर तृप्त हो गयी होगी | इनके शत कोटी का अर्थ प्रखर मात्रा में लेना ही समीचीत हैं| आज नामदेव के अभंगो के संग्रह गाथा के रूप में उपलब्ध हैं जिनकी संख्या कम हैं | इनमे लगभग हजार पाँच सौ अभंग इनके नाम पर मिलती हैं, परंतु ये सभी अभंग सन्त नामदेव द्वारा ही रचित हैं, इसमे विद्वानो को सन्देह हैं | कुछ विद्वानों का मानना हैं कि इन रचनाओं में से सात सौ अभंग ही प्रामाणिक होंगे शेष प्रक्षिप्त | डॉ.शं. गो. तुलपुले ने कहा हैं कि "नामदेव की गाथा में विष्णूदास नामा के अभंगो की प्रचुर मात्रा में मिलावट हुई हैं | उनमे से नामदेव के अभंगो को अलग करने की कोई तरकीब नही हैं |" डॉ. धर्मपाल मेस्त्री ने गुरु ग्रंथसाहिबा (मुखबानी) में प्राप्त संतो की वानियो का वर्गीकरण अपने शोध ग्रंथ में प्रस्तुत किया हैं| हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास के लेखकों के अनुसार "गुरु ग्रन्थ साहेब" में पदों की प्रामाणिकता प्राचीनता की राशी से अधिक हैं | मराठी संग्रह से प्राप्त हिन्दी पदों को मिलकर और मराठी हिन्दी दोनों संग्रहो में से समान पदों को निकाल देने पर नामदेव के संपूर्ण हिन्दी पदों की संख्या १२० होती हैं |

डॉ. भगीरथ मिश्र तथा डॉ. राजनारायण मौर्य ने नामदेव के प्राप्त सभी हिन्दी रचनाओं का एक संग्रह 'सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली' के नाम से संपादित कर सन १९६४ में पूना विश्वविद्यालय पूना, से प्रकाशित करवाया हैं | जिसमे नामदेव के २३० पद और १३ साखियों का समावेश हैं| इस ग्रन्थ में नामदेव की रचनाओं का उल्लेख करते हुए बताया गया हैं कि नामदेव को हिन्दी पद बहुत अधिक नहीं हैं | गुरु ग्रंथ साहिब में नामदेव के नाम पर संग्रहित ६१ पद हैं| पर इनमे से सभी नामदेव के नहीं हैं | विभिन्न हस्तलिखित प्रतियों में प्राप्त कुल २३४ के लगभग हिन्दी के पद नामदेव के नाम पर हैं | जो एस संग्रह में दिये गये हैं| इनमे से एक दो पद गोरखनाथ के नाम पर प्रसिद्ध हैं | एक दो कबीर के नाम पर और एक दो अन्य संतो के नाम पर इन पदों में से लगभग १७०-१७५ पद अवश्य ही नामदेव के हैं, क्योकि उन पर स्पष्ट रूप से मराठी की छाप हैं |

डॉ. राजनारायण मौर्य ने स्पष्ट लिखा हैं कि, "मुझे विभिन्न प्रकाशित और हस्तलिखित प्रतियों से कुल ३०० पद नामदेव के प्राप्त हुए हैं |

उधर कृ.गो.वानखेडे गुरुजी ने नामदेव की उपलब्ध सभी हिन्दी रचनाओं का संग्रह सत्ता नामदेव शीर्षक से प्रकाशन विभाग नई दिल्ली से सन १९७० में प्रकाशित किया हैं, जिसने

नामदेव के ३०१ पद एवं १५ साशी (दोहा) का समावेश हैं | इन हिन्दी पदों में सत्ता नामदेव सर्वात्मबाहू और अद्वैत दोहों के अनुसार विचार रखते हुए जान पडते हैं और उनकी भक्ति का स्वरूप भी शुद्ध निर्गुण भक्ति का ज्ञात होता हैं |

## १.३ सारांश

महाराष्ट्र के ही नही बल्कि अखिल भारतीय सत्ता परम्परा में नामदेव का स्थान अतिविशिष्ट एवं अत्यन्त साधारण हैं | वे मानवताबाहू के महान प्रचारक थे जिन्होंने जनमानस के संहारक की महत्वपूर्ण भूमिका बडी इमानदारी से निभाई| 'नाचू कीर्तनाचे रंगी ज्ञानदीप लावू जागी अर्थात कीर्तन के माध्यम से जग में ज्ञान दीपक प्रज्वलित करने का कार्य नामदेव ने किया| अती उत्कटता, भाववेश तथा तन्मयता का चरमोत्कर्ष नामदेव के कीर्तन की प्रमुख विशेषताएँ थी | किवदंती हैं कि नामदेव के कीर्तन की माधुर्य शक्ति से स्वयं विठ्ठल भी इनके साथ नृत्य करते थे | नामदेव के कीर्तन में इतनी सामर्थ्य थी कि उन्होंने औंढा के नागनाथ मन्दिर को अपनी और घुमाया था –

'देवल के पीछे नाया अल्लक पुसारे |

जिदरजिदर नामा उदर देऊळहीफिरे ||

भारतीय समाज में नहीं उर्जा तथा चेतना प्रवाहित करणे का कार्य नामदेव ने किया |

## १.४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. सन्त नामदेव के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालीए |

## १.५ लघुत्तरी प्रश्न

१) सन्त नामदेव का जन्म कब हुआ था?

२) सन्त नामदेव का जन्मस्थल कहाँ हैं ?

३) सन्त नामदेव की माता का नाम क्या था ?

४) सन्त नामदेव के पिता का नाम क्या था ?

५) सन्त नामदेव की पत्नी का नाम क्या था ?

६) सन्त नामदेव के गुरु का नाम क्या था ?

७) नामदेव ने अपने हिंदी पढो की रचना कहाँ की ?

८) नामदेव ने कितने अभंग रचने की प्रतिज्ञा की थी ?

९) गुरु ग्रन्थ साहिब में नामदेव के कितने हिन्दी पद सम्मिलित हैं?

१०) सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली में कितने पदों का समावेश हैं?

## १.६ सन्दर्भ ग्रन्थ


१) सन्त नामदेव की हिंदी पदावली, सं. भगीरथ मिश्र राजनारायण मौर्य, पुजा विश्वविद्यालय, पुजा, १९८४

२) सन्त नामदेव, कृ. गो. वानखेडे गुरुजी प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, द्वी. सं. १९८३

३) हिंदी निर्गुण काव्य का प्रारम्भ और नामदेव की हिन्दी कविता डॉ. श.के.आडकर

४) हिन्दी के महुली संतो की देन, विनयमोहन शर्मा, विहार, राष्ट्रभाषा परिषद, पटना-३ मार्च, १९५७.

५) पांच सन्त कवी डॉ. श.को.तुलपुले, व्हीनस प्रकाशन, पुणे, सन १९६२.

६) हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त काव्य, प्रभाकर माचवे चौखंबा विद्या भवन वाराणसी सं. १९६२ ई.

७) हिन्दी साहित्य में प्रति बिम्बित चिन्तन प्रवाह , डॉ.गोगावकर, डॉ.कुलकर्णी.

८) उतरी भारत की सन्त परम्परा, परशुराम, चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, पुनर्मुद्रण – २०२०

९) सन्त काव्य पं. परशुराम चतुर्वेदी, किताब महंत, इलाहाबाद, पेपर बँक सं. २०१७

१०) सन्त नामदेव और हिंदी पद साहित्य डॉ. रामचंद्र मिश्र, शैलेन्द्र साहित्य सदन, फार्रुखाबाद (उ.प्र.) सं. १९६९ ई.

११) हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ. रामकुमार वर्मा लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-१ आठवा संस्करण २०१०

१२) सन्त नामदेवांची सार्थ हिंदी पदे , माधव गोविन्द बारटक्के, श्री नामदेव अभंग, प्रकाशन समिती, पुणें सन १९६८

१३) मराठी संतो की हिन्दी वाणी से आनन्दप्रकाश दीक्षित, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, ०३, प्र.सं. १९८३.

१४) महाराष्ट्र के संतो का हिन्दी काव्य प्रभाकर सदाशिव पंडित, उत्तर प्रदेश संस्थान, लखनऊ, प्र.सं.१९९१.


❖❖❖❖

# २

# वारकरी सम्प्रदाय : अवधारणा एवं स्वरूप

**इकाई की रूपरेखा**

इकाई का उद्देश्य

२.० प्रस्तावना

२.१ वारकरी सम्प्रदाय की अवधारणा

२.१.१ वारकरी सम्प्रदाय का अर्थ

२.१.२ विठ्ठल भक्ति की परम्परा

२.२ वारकरी सम्प्रदाय का स्वरूप

२.२.१ वारकरियों के आराध्य

२.२.२ सगुण निर्गुण उपासना का समन्वय

२.२.३ भक्ति की प्रधानता

२.२.४ तुलसी माला का महत्त्व

२.२.५ नामस्मरण तथा की कीर्तन की महत्व

२.२.६ भक्ति सम्प्रदाय नहीं भक्ति आन्दोलन

२.२.७ वारकरी सम्प्रदाय का कार्य

२.३ सारांश

२.४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

२.५ लघुत्तरी प्रश्न

२.६ सन्दर्भ ग्रन्थ

**इकाई का उद्देश्य**

इस इकाई के अन्तर्गत सम्मिलित किए गए विषय के अध्ययन से अध्ययन कर्ता को निम्नलिखित जानकारी देने का उद्देश्य निहित हैं|

अ) वारकरी सम्प्रदाय का अर्थ एवं अवधारणा की जानकारी

आ) वारकरी सम्प्रदाय के स्वरूप से परिचय कराना |

## २.० प्रस्तावना

सामान्यत: जनता में संसारिकता से विरक्त परमतत्वान्वेषक को 'सन्त' कहने की परिपाटी हैं | परन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों में निर्गुण ब्रम्होपासकों को 'सन्त' और सगुण ब्रम्होपासको को भक्त के नाम से अभिहित किया जाता है | सगुण और निर्गुण में विभाजन रेखा खींच कर एक 'भक्त' और दुसरे को 'सन्त' कहने से इतिहास लेखन में सुविधा हो सकती हैं | तथ्य-ग्रहण में नहीं | मराठी साहित्य में 'सन्त' शब्द व्यापक अर्थ में व्यवहृत होता हैं| वहाँ विष्णू के अवतार 'राम' के उपासक तुलसीदास सन्त हैं और ब्रम्ह उपासना में 'राम' का नामस्मरण करनेवाले निर्गुणिया कबीर भी सन्त हैं | वहाँ भक्त और सन्त के बीच कोई भेद नहीं माना गया हैं |

महाराष्ट्र में समय समय पर जिन सम्प्रदायों ने जनता को अधिक प्रभावित किया वे पाँच सम्प्रदाय हैं | नाथ सम्प्रदाय, महानुभाव सम्प्रदाय, दत्त सम्प्रदाय, वारकरी सम्प्रदाय और समर्थ सम्प्रदाय | इनमे वारकरी सम्प्रदाय का प्रभाव सर्वव्यापक हैं | इस सम्प्रदाय ने पूर्ववर्ती नाथ सम्प्रदाय को अपने में समाहित कर लिया और परवर्तियों को इतना अधिक प्रभावित किया हैं कि उनमें तात्विक भेद-प्रायः बहुत ही कम रह गया हैं |

## २.१ वारकरी सम्प्रदाय की अवधारणा

महाराष्ट्र प्रान्त में प्रमुख पाँच सम्प्रदाय माने जाते हैं | इनमे सर्वश्रेष्ठ वारकरी सम्प्रदाय हैं | हजारो वर्षों से प्रवाहित वारकरी धुरा दिन-प्रतिदिन प्रबल होती जा रही हैं | इसे महाराष्ट्र का भक्तिधर्म कहता भी अनुचित न होगा | यह सम्प्रदाय पूर्ण रूप से वैदिक हैं | पंढरपूर को पवित्र स्थलों में इस सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव हुआ | यह यहीं पनपा और यहीं से इनकी शाखाओं का पूरे देश में विस्तार हुआ | महाराष्ट्र के प्राय: सभी मान्यवर सन्त इसी मत मत के अनुयायी हैं |

इस सम्प्रदाय का उदय कब हुआ यह निश्चित रूप से कहना कठिन हैं | इस विषय लेकर विद्वानों में मतभेद हैं | परन्तु सन्त ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम आदि वारकरी संतों की उक्तियों से पता चलता हैं कि प्राचीन काल में महाराष्ट्र में पुंडलिक नामक एक भक्त (सन ११२८) महात्मा पंढरपूर में तपस्या करते थे | उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर जब भगवान श्रीकृष्ण बालक का मनोरथ रूप धारण कर उनके सामने गये तब पुंडलिक ने उनके बैठने के लिये सामने पडी ईट रख दी | उसी ईट पर भगवान श्रीकृष्ण खड़े हो गये | वारकरी सम्प्रदाय के अनुयायियों का विश्वास हैं कि भगवान श्रीकृष्ण इसी रूप में मूर्तिमान हो गये | जो आज भी पंढरपूर में विद्यमान हैं | अत: यह स्वीकार किया जाता हैं कि पंढरपूर निवासी भगवान विठ्ठल के अविर्भाव का सम्बन्ध भक्त पुंडलिक से मानते हैं |

### २.१.१ वारकरी सम्प्रदाय का अर्थ

'वारी' का अर्थ हैं यात्रा और करी का अर्थ हैं करनेवाला | जो यात्रा करता हैं वह वारकरी कहलाता हैं | धार्मिक दृष्टि से उसे वारकरी कहा जाता हैं, जो पंढरपूर स्थित विठ्ठल की मूर्ति का उपासक हैं और आषाढ तथा कार्तिक शुक्ल एकादशी को नियमित रूप से

पंढरपूर की यात्रा करता हैं एवं मूर्ति के दर्शन का लाभ उठाता हैं | पंढरपूर में ईट पर खड़े भगवान विठ्ठल की भव्य मूर्ति हैं | पास के मन्दिर में भगवान की धर्मपत्नी रुक्मिणी जी की मूर्ति हैं| भगवान श्रीकृष्ण का बालरूप विठ्ठल माना हैं | महाराष्ट्र की काशी, श्री क्षेत्र पंढरपूर में आषाढ और कार्तिक को शुक्ल एकादशी को लाखों वारकरी इकट्ठा होकर भगवन भजन में तल्लीन हो जाते हैं | प्रतिवर्ष नियमपूर्वक पंढरपूर की यात्रा करनेवाला वारकरी कहलाता हैं | वारकरियों के उपास्य श्री पंढरीनाथ, पांडुरंग, विठ्ठल हैं | मन्दिर में भगवान विठ्ठल अकेले ही ईट पर खडे हैं | धर्मपत्नी रुक्मिणी का मन्दिर अलग हैं | इस सम्प्रदाय में उत्तर भारत की तरह राधिकाजी का उतना महत्त्व नहीं हैं, जितना रुक्मिणी जी का हैं | महाराष्ट्र में वारकरी नियमित रूप से आषाढी कार्तिकी की वारी तो करते ही हैं, माघी और चैत्र की भी यात्रा करते हैं | इनकी यात्राओं के अतिरिक्त हर महिने की एकादशी को भी विठ्ठल दर्शन करने पंढरपूर जाते हैं | आजकल कर्नाटक प्रान्त से भी वारकरियों की दिंडीया (वारकरियों का समूह) बड़ी मात्र में पंढरपूर आती हैं | यहा भिन्न भिन्न प्रान्त, जातियों एवं धर्मो के भक्त अपनी जाति तथा धर्म का अभिमान छोडकर विठ्ठल के नामसंकीर्तन में तल्लीन हो जाते हैं | इस सम्प्रदाय में वारकरी पांडुरंग को प्रिय (तुलसी) की माला गले में धारण करते हैं, इसीलिए यह माळकरी(गले में तुलसी की माला पहनने वाले ) सम्प्रदाय भी कहलाता हैं | इसमे भगवान को सर्वस्व अर्पित किया जाता हैं | इसीलिए इसे भागवत सम्प्रदाय भी कहते हैं |

### २.१.२ विठ्ठल भक्ति की परंपरा

पंढरपूर (महाराष्ट्र) में विठ्ठल-भक्ति की प्राचीन परम्परा विद्यमान हैं | कहते हैं कि इसके आद्यप्रवर्तक भक्तराज पुंडलिक विठ्ठल के अत्यन्त प्रिय भक्त थे | साथ ही अपने माता - पिता के वो बडे सेवक थे | उनकी भक्ति पर प्रसन्न होकर स्वयं भगवान उनसे मिलने पंढरपूर आए | पुंडलिक अपने माता पिता की सेवा में रत थे, अत: माता पिता की सेवा पूर्ण होने तक भगवान को खड़ा होने के लिये ईट दे दी | भगवान कटी पर हाथ रखकर ईट पर खड़े हो गये | पुंडलिक अपनी सेवा पूर्ण करके भगवान के पास आ गये | उन्होने भगवान की स्तुति की | भगवान ने वर माँगने के लिये कहा | तब पुंडलिक ने वर माँगा कि आप भक्तों के लिये इसी रूप में यहीं रहिए | तब से विठ्ठल भगवान कटी पर हाथ रखकर पंढरपूर में ईट पर खडे हैं –

'युगे अठ्ठावीस विटेवरी उभा| कर कटिवरी ठेवूनिया |

वारकरी सम्प्रदाय में कीर्तन के प्रारम्भ प्रसंगोपरान्त और अन्त में 'पुंडलिक वर दे हरि विठ्ठल' की घोषणा की जाती है जिससे यह प्रतीत होता है कि पुंडलिक को वर देनेवाले हरी विठ्ठल ही हैं जो विष्णू के कृष्णावतार का बालरूप हैं|

विठ्ठल भक्ति का सम्बन्ध पंढरपूर की विठ्ठल मूर्ति से हैं | अत: यह जान लेना जरुरी हैं कि यह पंढरपूर में कहाँ से आयी | नामदेव ने स्वयं स्वीकार किया हैं कि हमारे पहले भी अनेक भक्त हो गये हैं – ' पूर्वी अनन्त झाले | अतएव ज्ञानदेव एवं नामदेव से पूर्व यह परम्परा महाराष्ट्र में प्रचलित हैं | कई स्थानों पर इसे कन्नड से आई हुई कहा गया हैं| नामदेव कहते हैं की कानड़ा का विठ्ठल पंढरपूर में हैं – 'कानड़ा राजा पंढरीचा |'

सन्त एकनाथ तल्लीन होकर गाते हैं –

'कानड़ा विठ्ठल, कानड़ा विठ्ठल,

'कानड़ा विठ्ठल विटेवरी ||

कानड़ा विठ्ठल, कानड़ा बोले,

कानड्या विठ्ठले, मन वेधियले |'

संत अभ्यासक राजवाडे विठ्ठल को विठ्ठल से उत्पन्न बतलाते हैं | विठ्ठल का अर्थ होता हैं दूर | जो देवता दूर रहता हैं, वह हैं विठ्ठल | इसका अर्थ यह हुआ कि विठ्ठल - मत पंढरपूर में दूर से लाया गया हैं | डॉ. भंडारकर इसकी व्युतपत्ति विष्णू से मानते हैं | विष्णू का कानड़ा रूप विट्ठी हैं | अतएव ग. भंडारकर का यह मत समीचीन जान पड़ता हैं कि विठ्ठल कानड़ी हैं |

नि:सन्देह विठ्ठल का प्रसार ज्ञानेश्वर के पूर्व भी या साम्प्रदायिक मत के अनुसार इस भक्ति के आद्य प्रवर्तक पुंडलिक हैं, परन्तु सच्चे अर्थों में इस विठ्ठल भक्ति को अपने अद्वितीय व्यक्तित्व से सुगठित तथा संगठित रूप प्रदान करनेवाले ज्ञानेश्वर महाराज ही हैं | इस भागवत धर्म के विकास के सम्बन्ध में स्वयं तुकाराम ने कहा हैं –

"संतकृपा झाली| इमारत फळा आली|

ज्ञानदेवे रचिला पाया| उभारिले देवालया|

नामा तयाचा किंकर| तेणे केला हा विस्तार|

जनार्दन एकनाथ| खांब दिला भागवत|

तुका झालासे कळस| भजन करा सावकाश|"

अर्थात सन्तो की कृपा से यह भागवत धर्म का भवन बना| ज्ञानदेव ने नीव डालकर मन्दिर बनाया | नामदेव ने उसका विस्तार किया | एकनाथ ने खम्बों का आधार दिया और तुकाराम ने मन्दिर का कलश बिठाकर उसे पूर्णता दी|

## २.२ वारकरी सम्प्रदाय का स्वरूप

वारकरी सम्प्रदाय की व्युतपत्ति भागवत के उपदेशों से होने के कारण वारकरी सम्प्रदाय भागवत धर्म का अनुयायी कहलाता हैं | प्राणीमात्र में भगवान को देखना भागवत धर्म हैं | वारकरी सम्प्रदाय के आचार्यों ने भगवत प्राप्ति का सरल उपाय सगुण रूप की भक्ति बताया हैं | उन्होने भक्ति के नाना प्रकारों में नारायण तथा कीर्तन को सबसे महत्वपूर्ण और प्रभावशाली माना हैं | सन्त तुकाराम जी का कहना हैं 'बीज आणि फल 'हरि चे ते नाम' अर्थात हरि का नाम ही बीज हैं और हरि का नाम ही फल हैं | साधन और साध्य

दोनो हरि का नाम हैं | सन्त ज्ञानेश्वर कहते हैं – "जे जे भेटे भूत| ते ते मानिजे भगवंत|" वारकरी सम्प्रदाय के स्वरूप को निम्नप्रकार से विश्लेषित किया जा सकता हैं –

### २.२.१ वारकरी सम्प्रदाय के आराध्य

वारकरियों के आराध्य देवता पंढरपूर के विठ्ठल भगवान हैं | विठ्ठल कृष्णरूप हैं | वारकरियों में विठ्ठल अर्थात कृष्ण का बालरूप प्रिय हैं | विठ्ठल शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों में एकमत नहीं हैं | कुछ लोग इसे विष्णु का अपभ्रंश रूप मानते हैं, तो कुछ लोग विष्णुवाचक कन्नड रूप बताते हैं | पंढरपूर में विठ्ठल की मूर्ति कमर पर हाथ धरे हुए ईट पर खडी हैं | विठ्ठल की प्रतिमा हाथों में विष्णू चक्र और कमल लिए हुए हैं | वारकरी विठ्ठल को विष्णु का कृष्णावतार मान कर पूजते हैं | प्रतिमा के मस्तक पर 'शिवलिंग' का चिन्ह समझकर कुछ लोग उसे शैव मत का प्रतीक भी मानते हैं | यदि हम क्षणभर को यह भी मान ले तो भी मूर्ति के मस्तक पर शिवलिंग हैं, तब भी कोई आपत्ति नहीं होती हैं | रामानुजाचार्य के विशिष्ट्यद्वैत मत के प्रचार से दक्षिण में वैष्णवों और शैवों में जो संघर्ष आरम्भ हो गया था, वह 'विष्णू' की विठ्ठल मूर्ति पर 'शिव' की स्थापना से समाप्त हो गया होगा | वारकरी सन्तो ने विष्णू और शिव को एक कर जनता के हृदय से सांप्रदायिक कलेश धोने का विनम्र प्रयास किया हैं |

विठ्ठल मन्दिर के निकट दूसरे मन्दिर में विठ्ठल जी की धर्मपत्नी रुक्मिणी विराजमान हैं| ध्यान देने योग्य बात यह है कि कृष्ण के साथ यहाँ रुक्मिणी हैं, राधा नहीं| वारकरी अपने आराध्य को माता के रूप में भी मानते हैं| वे विठ्ठल को 'विठाई माऊली' कहकर भी पुकारते हैं |

वारकरी सम्प्रदाय के अनुयायी राम और कृष्ण को अभिन्न मानते हैं | उनका मंत्र हैं – 'जय जय रामकृष्ण हरि|' यद्यपि इस सम्प्रदाय में गीता और भागवत का बड़ा आदर हैं | परन्तु रामायण की भी उपेक्षा नहीं की हैं| सन्त एकनाथ ने भावार्थ रामायण की रचना की हैं | फिर भी प्रधानता कृष्ण रूप की ही दृष्टिगोचर होती हैं |

### २.२.२ सगुण-निर्गुण उपासना का समन्वय

वारकरी सम्प्रदाय को भगवान के दोनों रूप सगुण तथा निर्गुण मान्य हैं | पूर्ण सगुणोपासक होने पर यह परमात्मा को व्यापक एवं निर्गुण निराकार भी मानता हैं | परमात्मा व्यापक निर्गुण निराकार होते हुए भी सगुण साकार हैं यह इनकी मान्यता हैं | सन्त तुकाराम कहते हैं – 'दोन्ही टिपरी एकचि नाद|' इस निराकार ब्रम्ह की प्राप्ति का साधन सगुणोपासना नामस्मरण तथा भजन हैं | वारकरी सन्तो ने ज्ञान तथा भक्ति के समन्वय का विशेष आग्रह रखा हैं| एकनाथ महाराज ने भक्ती तथा ज्ञान के परस्पर सम्बन्ध को बडे ही रोचक उदाहरणों द्वारा प्रस्तुत किया हैं | वे भक्ति को मूल, ज्ञान को फल तथा वैराग्य को फूल बतालाते हैं | बिना फूल के फल उत्पन्न नहीं हो सकता और बिना मूल के मल असंभव हैं, इसीप्रकार बिना भक्ति और वैराग्य के ज्ञान का उदय नहीं हो सकता | भक्ति के उदर से ही ज्ञान उत्पन्न होता हैं | भक्ति ने ही ज्ञान को उसका गौरव प्रदान किया हैं | एकनाथ महाराज कहते हैं –

'भक्ति उदरी जन्मले ज्ञान,

भक्तिते ज्ञानासी दिधले महिमान|

भक्ति ते मूळ, ज्ञान ते फळ|

वैराग्य केवल तेथीचे फूल||'

### २.२.३ भक्ति की प्रधानता

वारकरी सम्प्रदाय अद्वैतवादी होते हुए भी भक्ति प्रधान हैं | वेदान्त से सच्ची भक्ति का स्त्रोत झरता हैं | हरि की व्यापकता सन्त तुकाराम ने भी अनुभव की हैं | अपने एक अभंग में वे कहते हैं –

'विश्वी विश्वंभर | बोले वेदांतीचे सार |'

अद्वैतानुभूती की सबसे ऊँची चोटी प्रेम भक्ति हैं | सृष्टि के प्राणियों में परमात्मा को अनुभव करना भागवत धर्म ही हैं | सन्त ज्ञानेश्वर कहते हैं – 'जे जे भेटे भूत | ते ते मानिजे भगवंत|' भगवान प्रेमस्वरूप हैं और प्रेम ही जगत और मानव जीवन का आधार हैं | परमात्मा व्यापक निर्गुण और निराकार होते हुए भी सगुण साकार रूप धारण करता हैं, ऐसा सम्प्रदाय का दृढ विश्वास हैं | इस सम्प्रदाय में साधारण मुमुक्षुओं के लिये सगुण पूजा या भक्ति कही गयी हैं और सिद्धी के लिये निर्गुण भक्ति का प्रावधान बताया गया हैं | भगवान के प्रति पूर्ण अनुराग के साथ उसके नाम का कीर्तन तथा भजन करना ही भक्ति का मुख्य साधन हैं | सन्त नामदेव नाम संकीर्तन तथा भजन का महत्व बताते हुए कहते हैं –

'अपने राम कूँ भज लै आलसीया| राम बिना जय जाल सिया|'

### २.२.४ तुलसी माला का महत्व

बालस्वरुप भगवान श्रीविठ्ठल अर्थात पांडुरंग बहुत प्रिय हैं | विठ्ठल के भक्त वारकरी गले में तुलसी की माला धारण करते हैं,यह बहुत से सम्प्रदायों में हैं किन्तु बहुत से सम्प्रदायों के अनुयायी जप करने के बाद उसे निकाल कर भी रख देते हैं | किन्तु वारकरियों में ऐसा नहीं हैं वे १०८ तुलसी(मणियों) की माला पहनते हैं | माला के बीच में मेरु मणि रहती हैं | एक बार माला धारण करने पर वह अन्त समय तक गले में रहती हैं | जिस प्रकार यज्ञोपवीत के बिना ब्राम्हण की कल्पना असम्भव हैं, उसी प्रकार कृष्ण की प्रिय तुलसी की माला धारण किये बिना कृष्ण भक्त वारकरी को सत्ता असिद्ध हैं | तुलसी की माला का इस सम्प्रदाय में अत्यधिक महत्व हैं | श्रीमद्भागवत में परमेश्वर को सर्वस्व अर्पित करनेवाले भक्त को भागवत कहा गया हैं | वारकरी श्रीविठ्ठल को सर्वस्व अर्पण करता हैं, अत: वह भागवत कहलाता हैं | इसी कारण इस सम्प्रदाय का दुसरा नाम भागवत सम्प्रदाय भी हैं |

### २.२.५ नामस्मरण तथा कीर्तन का महत्व

वारकरी सम्प्रदाय पूर्णतया वैदिक हैं | भक्ति के नौ प्रकार सम्प्रदाय को मान्य हैं, परन्तु उन सब में नामस्मरण तथा कीर्तन को अधिक महत्व दिया गया हैं | विठ्ठल नाम का उच्चारण, कण्ठ में तुलसीमाला, एकादशी का व्रत, ये तीन नियम इस सम्प्रदाय के मान्य सिद्धांत हैं | एकादशी का व्रत रखकर भगवान का स्मरण तथा कीर्तन करने का विधान प्रत्येक वारकरी को हैं| वारकरी सम्प्रदाय में गृहस्थाश्रम छोड देने का आदेश नहीं हैं| वारकरी अपने वर्ण और आश्रम के अनुरूप कार्य करते समय नामस्मरण करते हैं | कलियुग में यह सहज साधना मानी गई हैं | यही कारण हैं कि सन्तो के नाम संकीर्तन को जीवन का यज्ञ बना लिया था | सन्त नामदेव ने नामसाधना को आधार महत्व दिया था | वे कहते हैं – हरि का नाम सारे संसार का नाम हैं, मैने हरिनाम रुपी नाव से भवसागर को पार किया|'

"हरि नाँव एकल भुवन तत सारा |

हरि नाव नामदेव उतरे पारा ||"

यह हरीनाम कलियुग में भवसागर को पार करने का सबसे बडा साधन हैं –

> "साचा तुम्हारा नाँव हैं, झूठा सब संसार|
>
> मनसा वाचा कर्मना कली केवल नाव आधार||"

वर्णव्यवस्था और आश्रमव्यवस्था भक्ति में बाधक नहीं हैं | भक्ति में वर्ण तथा जाति की उँच - नीच का भी महत्व नहीं हैं | यहाँ आचरण की शुद्धता को अत्यधिक माना जाता हैं | सत्यभाषण करना, पर स्त्री को माँ-बहन के समान मानना, परधन की इच्छा न करना, मद्यपान से दूर रहना, परोपकार में रत रहना और मृदू भाषण करना आदि नियम इस सम्प्रदाय में आवश्यक माना गये हैं |

### २.२.६ भक्ति सम्प्रदाय नहीं 'भक्ति आन्दोलन'

वस्तुत: वारकरी पंथ को सम्प्रदाय कहने की अपेक्षा भक्ति आन्दोलन कहना उचित होगा | विठ्ठल भक्ति तुलसी माला तथा पंढरपूर की यात्रा को छोडकर इसमें और कोई सांप्रदायिकता नही हैं | विठ्ठल को प्रमुखता देकर अन्य किसी भी देवता की उपासना वारकरी कर सकता हैं | यह उदारता उस समन्वयात्मक दृष्टीकोन में हैं, जो ज्ञानदेव से लेकर सभी प्रमुख वारकरी सन्तो में पायी जाती हैं | इसे सभी प्रमुख वारकरी सन्तो ने प्रचारित किया हैं | विष्णू के साथ शिव का समन्वय भक्ति के साथ ज्ञान का समन्वय सगुण के साथ निर्गुण का समन्वय, वर्णाश्रम के साथ समता का समन्वय, वेद के साथ भागवत भक्ति का समन्वय करके वारकरी आन्दोलन ने उस शक्ति एवं प्रभाव का संचयन किया हैं कि काल के थपेडे सहकर भी शताब्दीयों के बाद आज भी यह सम्प्रदाय पल्लवित हैं और शनै शनै विकासमान भी हैं |

वारकरी भक्ति आन्दोलन को भारतीय भक्ति के विकास में बीच की कडी के रूप में स्वीकार करना चाहिये | इतना निश्चित हैं की वारकरियों को विठ्ठलभक्ति ने भारतीय भक्ति भावना को एक नया रूप देने का सफल प्रयास किया हैं | समन्वयात्मक दृष्टि को अपना कर सारे भारतीय समाज में अध्यात्मिक चेतना भरने का कार्य, आन्दोलन की पृष्ठ भूमि बनाने का कार्य वारकरी भक्ति-आन्दोलन ने किया हैं |

### २.२.७ वारकरी सम्प्रदाय का कार्य

वारकरी सम्प्रदाय का कार्य तीन भागों में विभाजित हैं | प्रथम सामाजिक दूसरा हैं धार्मिक और तिसरा हैं साहित्यिक | सामाजिक कार्य के बारे में वारकरी सम्प्रदाय ने वैदिक परम्परा में कुछ सुधार करके उसे भारतीय समाज में दृढ करने का काम किया | वारकरी सम्प्रदाय के सन्तो ने अपने उदाहरणों से यह सिद्ध कर दिया कि गृहस्थी में रहते हुए भी पवित्र आचरण एवं भक्ति के बल पर परमात्मा की प्राप्ति हो सकती हैं | गृहस्थाश्रम को अधिक महत्व देने के कारण मानव जीवन सुखमय बना और समाज में स्त्रियों का स्थान भी महत्वपूर्ण माना गया | योग साधना अनुष्ठान, ज्ञानार्जन आदि साधनों का महत्व कम करके नामसंकीर्तन जैसे सर्वसुलभ साधन का महत्व बढ गया | 'नाचू कीर्तनाचे रंगी | ज्ञानदीप लावू लावू जगी |' की उद्घोषणा से सारा माहौल गुँजने लगा | दीन-हीन जाति के दुर्बल हिन्दुओं का संगठन करके उनमे ईश्वर, धर्म, भाषा. संस्कृति आदि के प्रति निष्ठा पैदा करने का महान कार्य वारकरी सम्प्रदाय ने किया | सदाचरण पर अत्यधिक जोर देकर समाज में सद्गुणों का संवर्धन करने का प्रयास किया | व्यक्ति की श्रेष्ठता उसके सदाचरण पर निर्भर होती हैं, न कि उसकी जाति पर इस सिद्धांत को वारकरी पंथ ने व्यावहारिक रूप दिया | ब्राम्हण सन्त हरिजन सन्तो के चरण छुते थे, उनके साथ नामसंकीर्तन करने में आनंदविभोर होते थे | वारकरी सन्तो ने इस तरह जाति निरपेक्ष एक नई जमात को ही जन्म दिया |

वारकरी सम्प्रदाय में अनमोल साहित्य की रचना करके मराठी वाड्मय की वृद्धि की हैं | यह साहित्य केवल सामाजिक ही नहीं बल्कि मानव जीवन के नित्य, नैतिक, धार्मिक और सामाजिक मुल्यों से ओतप्रोत रहा हैं | जिस समय इस सम्प्रदाय का उदय हुआ था, उस समय साधारण जनता धर्म के प्रति उदासीन थी | उच्चवर्ण के लोग साहित्य रचना देववाणी संस्कृत में करके जनाभाषा को तुच्छ समझते थे | वारकरी सन्तो ने अपने हृदयगत भाषा को व्यक्त करने के लिये यथा भक्ति के द्वार सभी के लिये खोलकर लोक भाषा को अपनाया | वारकरी सम्प्रदाय के सन्तो ने संस्कृत भाषा में काव्य सृजन करने की रूढी को तोडकर बहुजन समाज के लाभ की दृष्टि से ओवी, अभंग, पद आदि छंदो में मराठी तथा हिन्दी भाषा में (जनभाषा) प्रत्युर रचना की | इसी कारण यह साहित्य अल्प समय में अधिक लोकप्रिय हुआ | जनता में काव्य के प्रति रुचि पैदा हो गई | सन्त काव्य महाराष्ट्र में जनता के कंठ में गूँजने लगा | सामाजिक उन्नति के साथ आत्मिक उन्नति करना भी इस सम्प्रदाय का परम उद्देश्य था | सन्त साहित्य ने परमार्थ विषयक भ्रामक कल्पना, रूढी और अत्याचार की बेड़ी आलोचना करके शुद्ध सरल भक्ति का मार्ग जनसामान्य को बताया | यह सन्त साहित्य जितना व्यापक, शुध्द, सरल और समृद्ध हैं,

उतना ही रसभरा भी | इस तरह महाराष्ट्र का यह वारकरी वैष्णव सम्प्रदाय नितांत लोकसंग्रही और लोकोपकारी हैं |

## २.३ सारांश

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में महाराष्ट्र में जिस सम्प्रदाय ने सर्वाधिक लोकप्रियता और प्रतिष्ठा अर्जित की वह वारकरी सम्प्रदाय हैं | यह सम्प्रदाय वैष्णव भक्ति का पुरस्कार करता हैं | भगवान कृष्ण के विठ्ठल रूप की उपासना वारकरियों के हृदय का हार हैं | महाराष्ट्र के वारकरी सन्तो ने कृष्ण के प्राय: बाल और मर्यादित रूप को अपनाया हैं | उन्होने उत्तर के भागवत साम्प्रदायी भक्तों की तरह कृष्ण का राधा और गोपी का श्रृंगारमूलक भक्तिरस का विशेष पान नहीं किया | इसीलिए पंढरपूर में विठ्ठल (कृष्ण) की मूर्ति के निकट राधा रानी न होकर रुक्मिणी देवी प्रतिनिष्ठ हैं | पंढरपूर स्थित अपने उपास्य दैवत विठ्ठल की नियमित यात्रा (वारी) करनेवाला वारकरी कहलाता हैं | वारकरी सम्प्रदाय में जाति-पाति, ऊंच-नीच, धर्म सम्प्रदाय आदि के लिये कोई स्थान नहीं हैं | इस तरह हिन्दी साहित्य को प्रभावित करनेवाले मत के रूप में तथा हिन्दी में भक्ति साहित्य का निर्माण करनेवाले भक्ति आन्दोलन के रूप में महाराष्ट्र के इस विठ्ठल भक्ति मार्ग का महत्वपूर्ण स्थान हैं |

## २.४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

अ) वारकरी सम्प्रदाय की अवधारणा एवं स्वरूप पर प्रकाश डालिये |

आ) वारकरी सम्प्रदाय के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उसके कार्य को विशद किजिये |

## २.५ लघुत्तरी प्रश्न

1) भक्तिकालीन किस सम्प्रदाय ने जनमानस को सर्वाधिक प्रभावित किया हैं?

2) महाराष्ट्र में कितने प्रमुख सम्प्रदाय माने जाते हैं?

3) वारकरी सम्प्रदाय का प्रादूर्भाव किस स्थान से माना जाता हैं?

4) विठ्ठल के आविर्भाव का सम्बन्ध किस भक्त हैं?

5) वारकरी का अर्थ क्या हैं?

6) विठ्ठल किस भगवान का बालरूप हैं?

7) वारकरी कब लाखों की संख्या में एकत्रित होकर भगवदभजन में तल्लीन हो जाते हैं? वारकरियों के उपास्य कौन हैं?

8) वारकरी सम्प्रदाय को भगवान के कौन-से दो रूप मान्य हैं?

9) विठ्ठल भक्त वारकरी गले में क्या पहनते हैं?

10) वारकरी सम्प्रदाय का दूसरा नाम क्या हैं?

11) वारकरी सम्प्रदाय के तीन सर्वमान्य सिद्धांत कौन से हैं?

12) वारकरी सम्प्रदाय के अनुसार कलियुग में भवसागर को पार करने का सबसे बडा साधन क्या हैं?

13) वारकरी सन्तो ने साहित्य रचना के लिये किस भाषा का अपनाया हैं?

## २.६ संदर्भ ग्रन्थ


1) सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली, सं. भगीरथ मिश्र, राजनारायण मौर्य पूना विश्वविद्यालय पूना, १९६४.

2) हिन्दी को मराठी सन्तो की देन, विनयमोहन शर्मा, विरार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना ड. मार्च, १९५७.

3) हिन्दी निर्गुण काव्य का प्रारम्भ और नामदेव की हिन्दी कविताडॉ. शां. के. आडकर, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद-१, प्र.सं. १९७२.

4) उत्तरी भारत की सन्त परम्परा परशुराम चतुर्वेदी, लोकमत प्रकाशन, प्रयागराज, ग. पुनर्मुद्रण २०२०.

5) हिन्दी साहित्य में प्रतिबिम्बित चिन्तन प्रवाह, डॉ. गोगावकर, डॉ. कुलकर्णी, फडके प्रकाशन, कोल्हापूर, प्र.स.१९७८.

6) हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त काव्य, डॉ. प्रभाकर माचवे, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, सं. १९६२ ई.

7) सन्त नामदेव और हिन्दी पद साहित्य डॉ. रामचन्द्र मिश्र, शैलेन्द्र साहित्य सदन, फर्रुखाबाद (३.५.) स. १९६९ ई.

8) सन्त काव्य पं. परशुराम चतुर्वेदी किताब महल, इलाहाबाद, सं. २०१७.

9) श्री सन्त नामदेवांची सार्थ हिन्दी पदें, माधव गोविंद बारटक्के, श्री. नामदेव अभंग प्रकाशन समिती, पुणे. सन १९६८.

10) पाच सन्त कवी, डॉ. श. गो. तुलपुले, व्हीनस प्रकाशन, पुणे, सन १९६२.

11) महाराष्ट्र के सन्तो का हिन्दी काव्य प्रभाकर सदाशिव पंडित, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, प्र. सं. १९९१.

12) मराठी सन्तो की हिन्दी वाणी, सं. आनन्दप्रकाश दीक्षित, पंचशील प्रकाशन जयपूर, ०३, प्र.सं. १९८३.


❖❖❖❖

# ३

# सन्त नामदेव की सामाजिक चेतना (समाज दर्शन)

**इकाई की रूपरेखा**

३.० इकाई का उद्देश्य

३.१ प्रस्तावना

३. २ सन्त नामदेव की सामाजिक चेतना

३.२.१ मूर्ति पूजा का विरोध

३. २.२ बाह्याचारों एवं मिथ्याडंबरों का विरोध

३. २.३ एकेश्वरवाद का प्रतिपादन

३.२.४ कथनी तथा करनी में एकरूपता

३. २.५ भक्ति और ऐहिक कार्य में एकता

३. २.६ सत्संग की प्रधानता

३. २.७ सतगुरु को महत्व

३. २.८ सहज अवस्था पर विश्वास

३. ३ सारांश

३. ४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

३. ५ लघुत्तरी प्रश्न

३. ६ सन्दर्भ ग्रन्थ

## ३.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत सम्मिलित की गई विषयवस्तू के अध्ययन से अध्ययनकर्ता निम्नलिखित जानकारियाँ देने का उद्देश्य निहित हैं –

अ) नामदेव सामाजिक चेतना का परिचय कराना

आ) नामदेव के सामाजिक दर्शन की जानकारी देना |

## ३.१ प्रस्तावना

साहित्य और समाज का मानव जीवन के साथ गहरा सम्बन्ध होता हैं | क्योंकि मानव की सोच, विचार, क्रिया - कलाप उसकी चिंतनशीलता आदि सभी समाज से जडी होती हैं और समाज की सभी घटनाओं को साहित्य प्रकार अपने साहित्य के मध्यम से व्यक्त करता हैं | साहित्यकार द्वारा वर्णित कोई भी घटना अपनी घटना नहीं होती हैं, अपितु उस घटना का प्रत्यक्ष या परोक्ष अनुभव से समाज से ही सम्बन्ध होता हैं | समाज से अलग साहित्य प्रकार का कोई अस्तित्व नहीं होता | इसीलिये साहित्यकार जीवन के प्रत्येक कदम पर समाज से प्रभावित होता रहता हैं | सामाजिक परिस्थितीयाँ ही साहित्य प्रकार के व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं |

नामदेव के समग्र जीवन का उद्देश्य तत्कालीन समाज को जागृत कर उसका संवर्धन एवं प्रवर्धन करना रहा हैं | संकीर्तन के रंग में रंग कर ज्ञान दीपक से अश्लील विश्व को दैदिप्यमान करने का संकल्प करने वाले नामदेव केजीवन का अंतिम लक्ष्य समाज में उदात्तमानवी मुल्यों की प्रतिष्ठापना करना या उनकी समग्र व्यक्तित्व परतत्कालीन महाराष्ट्र की सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थिती का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता हैं | नामदेव अत्यन्त संवेदनशील प्रकृति के व्यक्ति थे | अपने परिवेश की समस्याओं से वे विचलित हो उठते थे | विशेष रूप से धार्मिक कर्मकांड तथा सामाजिक विसंगतियों पर वे अपनी कड़ी आपत्ति व्यक्त करते थे | वर्णवादी व्यवस्था के शिकार नामदेव को शुद्र के रूप में प्रमाणित किया गया था, उनके लिये यह असह्य था | उनकी यह सामाजिक चेतना विद्रोह के रूप में व्यक्त हुई हैं |

## ३. २ सन्त नामदेव की सामाजिक चेतना

नामदेव का समाज दर्शन व्यक्ति एवं समाज के उत्कर्ष के सार्थक प्रयासों की महत्वपूर्ण कड़ी हैं | उनके लोक-जागरण कार्य का परिक्षेत्र अत्यंत व्यापक हैं | समाज में व्याप्त विषमता, शोषण, रूढी-परम्पराएँ, अन्ध विश्वास स्त्री का सामाजिक स्थान, अज्ञानता वश निर्माण हुआ | सामाजिक विकृतियों के विरोध में नामदेव ने जनमानस को जगाया | धर्म सुधार के रूप में धार्मिक ऐक्य का प्रतिपादन करते हुए उन्होने धर्म के नाम पर हो रहे कर्मकांडो का कड़ा विरोध किया | मानवधर्म का आग्रह करते हुए धार्मिक शोषण का निषेध किया | उन्होने समाज में हुए धन के सार्थक प्रयोग का उपदेश दिया | राजनैतिक चेतना के अन्तर्गत नामदेव ने सदैव जनतंत्र का समर्थन किया | प्रजातांत्रिक जीवन मुल्यों का प्रचार प्रसार वे अजीवन करते रहे |

### ३.२.१ मूर्ति पूजा का विरोध

नामदेव का समग्र सामाजिक चिन्तन धर्म तथा धार्मिकता से सम्बन्धित रहा हैं | प्रारम्भ में नामदेव की विचारधारा अत्यन्त संकीर्ण तथा संकुचित थी | लेकिन जीवन के अनुभव तथा उनकी ज्ञान की तृष्णा से नामदेव का दृष्टीकोण अत्यन्त व्यापक हो गया | अध्यात्मिक आलोचकों की शब्दावली में वे निर्गुण वादी हो गये | नामदेव के समय में हिन्दू धर्म में मूर्तिपूजा का बोलबाला था | यद्यपि प्रारंभ में नामदेव विठ्ठल मूर्ति के उपासक थे, परन्तु बाद में अपने दीक्षा गुरु विसोबा खेचर से निर्गुण निराकार ब्रम्ह का उपदेश पाकर वे गदगद हो

गये | उनकी भक्ति में जो आद्य भाव था | वह दूर हो गया | सन्त नामदेव के हिन्दी पदों में उनका निर्गुण भक्ति का रूप स्पष्ट दिखाई देता हैं | अपने मराठी के एक अभंग में मूर्ति पुजा का विरोध करते हुए वे कहते हैं कि - पत्थर की मूर्ति अपने भक्तों के साथ बातें करती हैं ऐसा कहने वाले तथा सुननेवाले दोनों भी मूर्ख हैं –"पाषाणाचा देव बोला भक्तातें |

सांगते ऐकते मूर्ख दोघे ||"

नामदेव के अनुसार भैरव, भूत तथा शीतला की उपासना और पुजा व्यर्थ हैं | वे कहते हैंकि–

"भैरवू भूत शीतला धावै | खर वाहन कह कर उडावै ||

हऊ तऊ एक रमईआ लेअऊ | आन देव तदलावनि देहऊ ||"

मूर्ति पुजा का खंडन करते हुए सन्त नामदेव कहते हैं - एक पत्थर पुजा जाता हैं और दुसरा ठुकराया जाता हैं | एक में देवत्व की अनुभूती हैं तो दुसरे में क्यों नहीं? –

"एकै पाथर कीजै भाउ | इजे पाथर धरिए पाउ ||

जै ओहु देउ ट ओहु भी देखा | करि नाम देवू हम हरि की सेवा ||"

सन्त नामदेव का यह तार्किक मंत्यव्य सहज भक्ति की मान्यता और आडंबर पूर्ण मूर्ति पुजा की व्यर्थता प्रतिपादित करता हैं |

### ३.२.२ बाह्याचारों एवं मिथ्याडंबरों का विरोध –

प्राय: सभी निर्गुणवादी सन्त कवियों ने धार्मिक आडम्बरों तथा कर्मकांडो पर करारा प्रहार किया हैं | डॉ. शिवकुमार मिश्र के अनुसार 'निर्गुण संतो' ने सबसे कड़ी चोट हिन्दू और इस्लाम धर्ममतों के ब्राम्हाचारों पर की उनकी संकीर्ण तथा संकुचित आस्थाओं पर की | सन्त नामदेव ने भी अपने समय के समाज में प्रचलित बाह्याचारों और मिथ्याडम्बरों का घोर विरोध किया हैं | वे अपने मन को संबोधित करते हुए कहते हैं कि, हे मन ! अश्वमेंध तुला दान प्रयाग में संगम में स्नान, गंगा में पिंड दान आदि सभी बाह्याचार एकनिष्ठ भक्ति के समक्ष देय हैं | हे मन ! तू सभी भेदों का त्याग कर और निरन्तर गोविन्द का स्मरण कर तु निश्चय ही संसार सागर से तर जाएगा | इसमें सन्देह नहीं |"

असुमेंध जग ने| तुला पुरख दाने| प्राग एस्ना ने|

तऊ न पुजरी हरि कीर्ती नामा||

अतुने रामही भज रे मन आलसिआ|

सिमरि सिमरि गोविन्दू| भजू नामा तससि भव सिंध||

सन्त नामदेव के मतानुसार भगवान की पूजा के लिये जल, पुष्प माला, नैवेद्य, दूध आदि का प्रबन्ध आडम्बर पूर्ण हैं | भले ही पुजारी इन्हें विशुद्ध और पवित्र समझे | कीटों, भ्रमरों, आदि के द्वारा ये पहले ही जुठला दिये गए है |अतः यह पहले ही अपवित्र और अशुद्ध हैं | फिर ये पूजा की सामग्री कैसे हो सकते हैं?

"आणिले पुरप गुँथिले माला कल गोविन्द ही हार रचूँ|

पहली बांस जूँ भवरे लीनो, जुठणि मैला काई करूँ||

आणिलै तंदुल राँधिले पीरा बाल गोविन्द ही भोग रचूँ|

पहली दूध जु बहन बिटाल्या जूणणि मैला काई करूँ||"

करोड़ों तीर्थ यात्राएँ पिंड दान तथा अन्य सभी प्रकार के दान व्यर्थ हैं |नामदेव का मानना हैं कि योग, यज्ञ, तप, होम, नेम, व्रत आदि बाह्याडम्बर किसी काम के नहीं हैं | अपने लोगों को प्रबोधित करते हुए नामदेव कहते हैं कि – हे भक्तों तुम मापारण्य को छोड नित्य राम नाम को लेते रहो|

'भह्या कोई तूलै हे राम नाय|

जोग जिग तय होय नेम व्रत ए सब कौने काम||"

नामदेव के समय में धर्म के नाम बलि चढ़ाने की परम्परा थी | मूर्ति पूजा और बलि चढाने की प्रथा का खंडन करते हुए नामदेव कहते हैं –

'पाहन आगै देव बाटीला| बाकी प्राण नहींबाकी पूजा रचिला||

निरजीव आगे सरजीव मारै| देषत जनम अपनौ राहैं||"

### ३.२.३ एकेश्वरवाद का प्रतिपादन

जिन परिस्थितीयों ने निर्गुण पंथ को जन्म दिया, एकेश्वरवाद उनकी सबसे बड़ी आवश्यकता थी | वेदान्त के अद्वैतवादी सिद्धांतो को मानने पर भी हिन्दु बहुदेववाद के चक्कर में बूरी तरह फँस गये थे और एक ही अल्लाह को माननेवाले मुसलमान भी स्वयं एक तरह से बहुदेववादी ही थे | ऐसी परिस्थितीयों में निर्गुणवादी संतो ने हिन्दु और मुसलमानों को एकेश्वरवाद का सन्देश दिया तथा बहुदेववाद का विरोध किया |

वारकरी सम्प्रदाय में एक देवोपासना का ही महत्व हैं | सन्त नामदेव ने बहुदेववाद विरोध करते हुए एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया हैं | अपने 'गोविंद' का परिचय देते हुए नामदेव कहते हैं – "वह(ईश्वर) एक और अनेक भी हैं, वह व्यापक हैं और पूरक भी हैं | मै जहाँ देखता हूँ वहाँ पर सिर्फ वही दिखाई देता हैं | माया की चित्र विचित्र बातों द्वारा मुग्ध होने के कारण सभी कोई इस रहस्य को समझ नाही पाते | सर्वत्र गोविन्द ही गोविन्द हैं, उसके अतिरिक्त अन्य कोई भी नहीं हैं | वह सदस्यों मानियों के भीतर ओतप्रोत धागे की भाँति इस विश्व में सर्वत्र विद्यमान हैं | नामदेव का कहना हैं कि इस बात को अपने ह्रदय में भलिभाँति समझ लो की मुरारी ही एकमात्र घटघट में और सर्वत्र एक रसभाव से व्याप्त हैं |

"एक अनेक क्रियापक पूरव जात देखऊ तत खोई||

माझ्या चित्र विचित्र विमोहित बिरला बूझै कोई||

सभु गोविन्द हैं सभु गोविन्द हैं गोविन्द बिनु नहीं कोई||

सूत एक मणि सत सहस्त्र जैसे उतिपोती प्रभु सोई||

जलतरंग अरु फेन बुद्बुदा जलते भिन्न न कोई||

इहू परपंचू पारब्रम्ह की लीला विचरत आन न होई||

मिथीआ भरमू अरु सुपनू मनोरथ सति पदारतु जनिआ||

मुक्ति मनसा गुरु उपदेसी जागत ही मनू मानिआ||

कहत नामदेव हरि सी रचना देखऊ रिदै विचारी||

पट पट अंतरि सरब निरंतरि केवल हक मुरारी||

इसीलिये उन्होंने उस एक ही देव अर्थात विठ्ठल की भक्ति को ही अपनाया और अन्य दैवी देवताओं की पूजा को व्यर्थ बतलाया | उनका कहना हैं किजो लोग भैरव का ध्यान करते हैं वे ही होंगे और जो शीलता का ध्यान करते हैं, गधा उनका वाहन होगा और वे निरंतर धूल उड़ायेंगे | अब रहा मै | मै तो मात्र भगवान की भक्ति करता हूँ | भगवान की तुलना में अन्य देवताओं की उपेक्षा करताहूँ |

"भैरवू भूत सीतला धावै| खर वहन अहू छार उडावै||

हक तक एक रमईया तेअरू| आन देव बदलावनि देहरू||

उस एक के प्रति अपनी अनन्य भावना प्रकट करते हुए सन्त नामदेव कहते हैं कि "एक राम की वन्दना करने पर मै और किसी देवता की वन्दना नहीं करूँगा | राम रसायन प्राशन करने के बाद मै किसी अन्य देवता के सामने नहीं विधियाऊँगा | नामदेव कहते हैं कि एकमात्र राम मेंरे जीवन में रमें हुए है | अत: अन्य देवता मेरे लिये किसी काम के नहीं है |

"राम जुहारी न और जुहारौ| जीवनि जाई जनम कत हारौ

आन देव सौ दीन न भाषौं| राम रसाइन रसना चाषौं||

यावर जंगम कीट पतंगा| सत्य राम सब हित के संग||

भनत नामदेव जीवनि रामा" आनदेव फोकट वेकामा||

### ३.२.४ कथनी तथा करनी में एकरूपता

सांसारिक व्याक्तियों की सामान्य प्रवृत्ति होती है कि वे कहते कुछ और हैं करते कुछ और है| संतो के अनुसार मनुष्य को वैसा ही आचरण करना चाहिये जैसा वह कहते है | यही कारण हैं कि संतो के साहित्य में किसी भी प्रकार की अतिश्योक्ति की गन्ध नहीं मिलती | व्यवहार और आदर्श के साथ ही इन संतो ने विचार और आचरण में भी सामंजस्य लाने पर जोर दिया है | उन्होंने जो कुछ भी लिखा हैं वह अपने अनुभव के आधार पर तथा अपने उपदेशो पर आचरण करते हुए लिखा है | सन्त नामदेव ने भी करनी के बिना कथनी का विरोध किया है | उनके अनुसार भक्त और परमात्मा में कोई अंतर नही है | जो इस प्रकार का अन्तर

मानता है वह नर पशु है | जो परमात्मा को छोडकर वेद विधि से कार्य करता है, वह जल भुन कर मर जाता है | व्यक्ति बाते तो बहुत बढचढ कर कहता हैं |

भगवंत भगता नहीं अंतरा|

हैं करि जाते पशुवा नरा|| टेक||

छांडी भागवत वेद विधि करै|

दाझे भूजै जामें परै||१||

सथनी बदनी सब कोई कहैं|

करनी जन कोई बिरला रहैं||२||

सन्त नामदेव के मतानुसार जब तक अन्तकरण शुद्ध नहीं है तब तक ध्यान,जप आदि के करने से क्या लाभ होगा ? जैसे - साँप केंचुली छोड देता हैं, परन्तु विष नहीं छोडता |

'काहैं कू कीजै ध्यान जपना| जो मन नाही सुध अपना||

साँप काँचली छांडै विष नहीं छांडे| उदिफ में बहू ध्यान मांडे||

नाचने गाने तथा पिस पिस कर चंदन लगाने से क्या लाभ होगा? यदि तुने स्वयं को ही नहीं पहचाना तो तुझे समझना होगा कि भ्रम में पड़ा हुआ तेरा मन चारों ओर भटकता रहेगा –

'का नाचीला का गाईला | का घासि घासि चंदन लाईला||

आपा पर नही चीन्धिला| तो चित चिता रै इह्लीला||

जब तक अन्त: करण शुद्ध न हो तबतक नहाने धोने से कुछ नहीं होगा | गले में तो तुलसी की माला हैं और अन्त: करण कोयले सा काला हैं, ऐसे बगुला भक्तों की आलोचना करते हुए नामदेव कहते हैं –

"न्हावै धोवे करै सनान| हिरदे आचिन माथे लान||

गलि गलि हिरै तुलसी की माला| अंतरगति कोईला काला||"

### ३.२.५ भक्ति और ऐहिक कार्य में एकता -

वारकरी सम्प्रदाय के सभी संतो ने भक्ति और सांसारिक कार्यों को कभी अलग अलग नहीं समझा | भक्ति और जीविका कार्यों में कोई विरोध नहीं माना क्योंकि भक्ति हृदय से होती है और कर्म हाथो से इसीलिये संतो ने कर्म और भक्ति दोनों को एक-दूसरे का पूरक माना है | श्रम से भक्ति सहज होती हैं और भक्ति में श्रम सहज हो जाता है | संतो ने नामस्मरण (भक्ति) और श्रम (कर्म) का साथ योग किया | इस प्रकार नामस्मरण और कर्म का समन्वय निर्गुण सन्तकाव्य की अद्वितीय विशेषता मानी गयी है | कबीर भजन और बुनकरी का काम, नामदेव भजन और दर्जी का काम, रैदास भजन और मोची का काम, सेना भजन और नाई का काम, गोरा भजन और कडे बनाने का काम साथ साथ करते थे |

सन्त नामदेव ने भी भक्ति तथा ऐहिक कार्य की एकता पर बल दिया हैं | उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आजीविका के अनुसार काम करते समय हरि भजन या नामस्मरण भी करते रहना चाहिये | सन्त नामदेव कहते हैं कि मे राम न गज हैं और जिव्हा कैंची हैं | मै मन रुपी गज और जिव्हा रुपी कैंची की सहायता से यम का बन्धन काटता हूँ | मै कपडा रँगने और सिलने का काम करता हूँ लेकिन घडी भर के लिये भी भगवान का नाम विस्मृत नहीं करता हूँ –

"मन मेंरो गजु जिव्हा मेंरी काती|

मपि मपि काटऊ जम की फासी||१||

रागनि रागऊ सिवनी सीवऊ|

राम नाम बिनु धरोय न जीवऊत शा||

सन्त नामदेव का मानना हैं कि राम का ध्यान संसार में सभी आवश्यक कार्य करते हुए भी करना चाहिये | वे कहते हैं – में राम न राम नाम से इस प्रकार बँधा हुआ है जैसे स्वर्ण तौलते समय सुवर्ण कार का ध्यान तुला की ओर बना रहता है | जिस प्रकार युवतियाँ के सिर पर पानी से भरे घडे होते है और वे आपस में मनो विनोद करती हुई चलती हैं किन्तु उनका ध्यान सदा घडो पर ही रहता है, जिस प्रकार माता काम न घरेलू झंझटों में फँसा रहने पर भी पालने में लेटे हुए अपने बालक की ओर रहता हैं, उसी प्रकार मेरा मन राम नाम में लगा रहता है |

"ऐसे मन राम नामै वेधिला| जैसे कनक तुला चित रचिला||१||

आनिलै कुंभू भूरारले उदिक| राजकुँवरी तुलहरि मै|

हसत विनोद देत करताली, चित्त खूँ घागरी रचिला||२||

भणत नामदेव सुनौ तिलोचन, बालक पालनि वेढिला|

अपने मन्दिर काज करती, चित्त सू बालक रचिला||४||

### ३.२.६ सत्संग की प्रधानता

सत्संगति को भक्ति का प्रमुख साधन माना जाता है | आध्यात्म रामायण में तो इसे प्रथम साधन कहा गया है | इस साधन की सत्ता को नामदेव ने विशेष महत्व दिया है | उन्होने अपनी रचनाओं में उसके आदर्शो का प्रतिपादन किया है | संतो के सहवास के लिये नामदेव हमेंशा आतुर रहते है | वे अपनी आंतरिक अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहते है – आज मुझे कोई हरि का दास मिले तो परम सुख होगा वह मेरे मन में भाव-भक्ति जागृत करेगा, मेरे मन की बुराइयाँ दूर करेगा तभी आत्मज्ञान का प्रकाश फैलेगा | नामदेव कहते है कि जब मेरा मन उदास रहता है तब सन्त समागम से मुझे अपार सुख की प्राप्ति होती है –

"आज कोई मिलसी मनै राम सनेही|

तब सुष पावै हमारी देही||

भगति मन में उपजावै| प्रेम प्रीती हरि अंतरी आवै ||१||

आपा पर दुविधा सवनासै| सरजै आतम ध्यान पकासै ||२||

जन नामा ,मन परा उदास| तब सूप पावै मिलै हरिदास ||३||

निर्गुण मत जाति व्यवस्था का उन्मूलन करते हुए अलगाव की प्रथाओं का खंडन करता है | बाह्य आडम्बरो के निराकरण की अपील करता है और अंत में भक्ति पूर्ण कथनी करनी और रहनी की व्यवस्था करता है | इन सब धारणाओं से उन्होने एक नया समाज बनाया जो 'सत्संग' के नाम से प्रसिद्ध है |संत नामदेव ने जाति-पाति से उत्पन्न ऊँच-नीच के भेदभाव को झेला था, लेकिन दर्जी के घर में जन्म लेकर भी गुरु के उपदेश एवं साधू संगति के प्रसाद से भगवान का दर्शन किया वे कहते है –

"छीपे के घर जनम मैला|

संतान के परसादी नामा हरि भेटुला||

हीन जाति में पैदा होने की बात नामदेव को हमेंशा खटकती थी –

"हीन दीन जात गोरी पंढरी के राया|

ऐसा तुमने नामा दाराजी कारे की बनाया||"

परन्तु सन्त संगति के कारण नामदेव का चित्त भगवान में लग गया और जाति प्राप्ति का विषाद मिट गया

"का करौ जाति का करौ पाति | राजाराम सेऊँ दिन राती |

सु इने हुई रूपे का धागा | नामें का चिंतू हरिसु लागा |

### ३.२.७ सतगुरु का महत्व

निर्गुण सम्प्रदाय में गुरु का स्थान सर्वोपरी है | नवीन साधनो के लिये तो परमेंश्वर से भी बडा गुरु होता है, क्योंकि गुरु कृपा द्वारा ही शिष्य भगवान कृपा की ओर उन्मुख होना सीख लेता है | जिस प्रकार सम्पूर्ण सन्त साहित्य में गुरु को सर्वश्रेष्ठ माना गया है – उसी प्रकार नामदेव ने भी जीवन में गुरु का स्थान सर्वोपरी माना हैं| सत्य का अन्वेषण और ज्ञान की प्राप्ति बिना गुरुकृपा के संभव नहीं है | नामदेव के लिये गुरु का शब्द वैकुंठ की सीढी के समान हैं –

"गुरु को शब्द वैकुंठ निसरनी|"

अंतः नामदेव सतगुरु की शरण में जाने से क्या लाभ होगा यह समझाते हुए अपने मन को चेतावनी देते है तथा दुख का कारण भी स्पष्ट करते हुए कहते है – 'तूने अनेक बार पशु और मानव देह धारण किया | चौरासी लाख योनी में भ्रमण कर तार हा परन्तु कही भी तुझे शांति नहीं मिली क्योकि सतगुरु की शरण में जाकर तूने रामनाम का उच्चारण हीं किया | –

अनेक बार धसू हैं अवतनौ|

लष चौरासी भरमत फियौ ||१||

पायौ नहीं कही विश्राम

सतगुरु सरति कह्यौ नहीं राय ||२||

नामदेव का मानना हैं की बिना गुरुप्रसाद के कुछ प्राप्त नहीं होता | सतगुरु की कृपा से ही उन्होने साधु का जीवन ग्रहण किया है | वे कहते है कि गुरुकृपा से ही जी के सभी संकट मिट जाएंगे, वह यम यातना से मुक्त हो जायेगा | उसे निर्वाण पद प्राप्त होगा | गुरु को छोडकर वह कहीं अन्यत्र नहीं जायेगा | नामदेव कहते है की मै तो केवल गुरु ही की शरण में जाऊँगा जिससे सभी प्रकार का हित संभव हैं" –

"जऊ गुरदेउ त संसा टूटै|

जम गूरदेउ भऊजल तरै|

जमगुरदेउ अवर नहीं जाई|

बिनु गुरुदेउ अवर नहीं जाई|

नामदेव गूर की सरणाई||"

सन्त नामदेव ने अपने गुरु विसोबा खेचर का बडी श्रद्धा से स्मरण करते हुए कहा है कि उनकी कृपा प्रसाद से ही मैने तुलसी की माला पाई | उन्होने सद्गुरू होकर मुझे परमतत्त्व का साक्षात्कार कराया –

'खेचर भूचर तुलसी माला हार परसादी पाइया,

नामा प्रणवै परमततु, हैं सतिगुरु होई लखाइया||"

### ३.२.८ सहज अवस्था पर विश्वास

सन्त नामदेव ने कई बार अपनी रचनाओं में 'सहज' शब्द का प्रयोग किया है | उनके अनुसार बाह्य कर्म कांडो से कोई लाभ नहीं | बिना प्रभू पर विश्वास किये तीर्थव्रत, आदि व्यर्थ है | अत: लोगो के आडम्बर पर वे महीन प्रहार करते है और सहज कर्म करने में विश्वास रखते थे | संत नामदेव सहज साधना कोई श्वर प्राप्ति का सबसे उत्तम मार्ग मानते है | सहज से उनका अभिप्राय उस निष्काम भक्ति से है जो बिना किसी साधना और कर्म के तथ्य बिना किसी साधना और कर्म के तथा बिना पाखंड के सच्चे और सरल हृदय से की जाती हैं | हृदय में ईश्वर प्रेम की सच्ची अनुभूति की साधना की सहज अवस्था में खो जाती हैं |

सभी प्रकार की समाधियों में सहज समाधि को सर्वोत्तम एवं उत्कृष्ठ कहा गया है, क्योंकि इसमें साधक को आसन, मुद्रा, प्राणायाम, ध्यान, धारणा आदि क्लिष्ट साधना करने की आवश्यकता नहीं होती | नामदेव बाह्याडम्बर पूर्ण साधना का विरोध करते हुए 'सहज

साधना पर बल देते हुए कहते हैं कि "मै फूलो तथा पत्तियों से हरि की पूजा नहीं करुंगा क्योंकि वह मन्दिर में नही है | मैने हरि के चरणो पर अपने आपको समर्पित कर दिया हैं, अब मेरा पुनर्जन्म हीं होगा –

"पातितोडी न पूजूँ देवा| देवलि देव न होई|

नामा कहैं मै हरि की सरांना| पुनरवि जन्म न होई||

इसीलिये नामदेव निष्काम होकर सदा सहज समाधि में मग्न रहते हैं–

"भगत नामदेव सेविनिरंजन सहज समाधि लगाइ रे|"

## ३.३ सारांश

सन्त नामदेवकालीन समाज अपनी अंध संकीर्णता के कारण उन्नति-प्रगति से दूर था | तत्कालीन समाज में अनेक सामाजिक विकृतियाँ व्यापक रूप से विद्यमान थी | जाति-भेद, ऊँच-नीच, स्पृश्य-अस्पृश्य, ब्राम्हण-शुद्र, दलित-सवर्ण आदि भेद के कारण समाज में स्पष्ट विभाजन था | वर्णाश्रम व्यवस्था की चरम सीमा इस कालखंड में देखी जा सकती हैं | शूद्रों का समाज में कोई स्थान नहीं था | ब्राम्हण का स्थान समाज में सर्वश्रेष्ठ माना जाता था | ब्राम्हण धर्म के ठेकेदार बनकर सामान्य जनता की धार्मिक आस्था का भावनात्मक शोषण कर रहे थे | नामदेव ने इस प्रथा का घोर विरोध किया |

अपने समय के परिवेश को समस्त विरूपताओं : कुरूपताओं का विवेचन नामदेव ने अपने काव्य में किया हैं | मराठी की अपेक्षा उनकी हिन्दी पदावली सामाजिक-राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त संवेदनशील हैं | नामदेव को चिंता और चिन्तन का केन्द्र समाज और परिवेश दृढ़अनुभवहै | आध्यात्मिक एवंधार्मिक आस्था के क्षेत्र में उन्होने पुरोहितों के वर्चस्व का विरोध किया | आचरण की शुद्धता पर बल दिया और धार्मिक कर्मकांडो का विरोध करते हुए एक स्वस्थ समाज को स्थापित करने का प्रयास किया |

## ३.४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

अ) सन्त नामदेव की सामाजिक चेतना पर प्रकाश डालिये |

आ) "नामदेव ने अपने समय में प्रचलित धार्मिक पाखंड एवं सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का सफल प्रयास किया" इस कथन की समीक्षा किजिये |

## ३.५ लघुत्तरी प्रश्न

1) प्रारम्भ में नामदेव किसके उपासक थे?

2) नामदेव को निर्गुण निराकार ब्रम्ह का उपदेश किसने दिया?

3) निर्गुण वादी संतो ने हिंदू और मुसलमान दोनों को किसका सन्देश दिया?

4) नामदेव का मुरारी कहाँ व्याप्त हैं?

5) नामदेव के जीवन में कौन रमा हुआ है ?

6) किसने करनी के बिना कथनी का विरोध किया है ?

7) संतो ने किसे एक दुसरे के पूरक माना है ?

8) नामदेव का मन और जिव्हा क्या है ?

9) आध्यात्म रामायण में कि से भक्ति का प्रथम साधन कहा गया है ?

10) नामदेव के उदास मन को किससे अपार सुख की प्राप्ति होती है ?

11) नामदेव के लिये क्या वैकुंठ की सीढ़ी के समान है ?

12) किसकी कृपा से नामदेव ने साधू का जीवन ग्रहण किया है ?

## ३.६ सन्दर्भ ग्रन्थ

1) सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली, सं. भगीरथ मिश्र राजनारायण मौर्य, पूना विश्वविद्यालय, पूना, प्र.स. १९६४.

2) हिन्दी निर्गुण काव्य का प्रारम्भ और नामदेव की हिन्दी कविता, डॉ. शं. के. आडकर रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं. १९७२.

3) उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, परशुराम चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, पुनर्मुद्रण, २०२०.

4) हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त काव्य, डॉ.प्रभाकर माचवे, चौखंदा विद्याभवन, वाराणसी, सं. १९६२ ई.

5) हिन्दी को मराठी संतो की देन, विनयमोहन शर्मा, विहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना इ. १९५७.

6) सन्त काव्य परशुराम चतुर्वेदी, किताब महल, इलाहाबाद, पै.सं. २०१७.

❖❖❖❖

# ४

# सन्त नामदेव की दार्शनिक विचारधारा (दर्शन)

**इकाई की रूपरेखा**

४.० इकाई का उद्देश्य

४.१ प्रस्तावना

४ २ सन्त नामदेव की दार्शनिक विचारधारा

४. २.१ सन्त नामदेव का ब्रम्ह वर्णन

४ .२.२ सन्त नामदेव का जीवात्मा वर्णन

४ .२.३ सन्त नामदेव का माया दर्शन

४ .२.४ सन्त नामदेव का जगत वर्णन

४ .२.५ सन्त नामदेव का लौकिक जीवन विषयक दृष्टिकोण

४ .३ सारांश

४. ४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

४.५ लघुत्तरी प्रश्न

४. ६ सन्दर्भ ग्रंथ

## ४.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत सम्मिलित की गई विषयवस्तू के अध्ययन से अध्ययन कर्ता को निम्नलिखित जानकारियाँ देने का उद्देश्य निहित है –

1) सन्त नामदेव की दार्शनिक विचारधारा का परिचय कराना एवं
2) नामदेव के आध्यात्मिक विचारों की जानकारी देना |

## ४.१ प्रस्तावना

दर्शन का सम्बन्ध किसी साधक या कलाकार की उस दृष्टि से स्वीकार किया जाता है जो प्राय: आध्यात्मिक होती है | उस दृष्टि का सीधा सम्बन्ध ब्रम्ह, जीव, जगत, माया आदि परोक्ष चेतनाओं के साथ होता है | उन्हीं चेतनाओ का व्यक्तिकरण उस साधक या कलाकार के सृजन में रुपायित होकर जगत जीवन को प्रभावित करता है | यहाँ यह सब स्पष्टरूप से

समझ लेना चाहिए कि दर्शन का सम्बन्ध प्राय: सूक्ष्म के साथ रहता है, जबकि जीवन-दर्शन का सम्बन्ध प्रत्यक्ष जगत के प्रति दृष्टिकोण के साथ |

वारकरी सम्प्रदाय में पायी जानेवाली समन्वय भावना और बुद्धिवादिता, व्यावहारिक सहजता, मानवीयता के कारण महाराष्ट्र में इसका खूब प्रचार प्रसार हुआ | इस सम्प्रदाय में व्याप्त समन्वय दृष्टि का भी एक स्पष्ट एवं प्रत्यक्ष कारण था और वह यह कि नामदेव समेत प्राय: अधिकांश सन्त साधक प्राय: निम्न जाति वर्गो से आए थे | विसोबा खेचर पे नामदेव दर्जी थे, सावता माली थे, नरहरि सुनार थे | इन्होंने विभिन्न सम्प्रदायों के सज्जनो, सन्तो साधूओं के सम्पर्क में आकर, उनसे सत्संग कर, जो कुछ भी सुना, उससे सारतत्व ग्रहण कर अपने मतों एवं दार्शनिक चेतनाओं का निर्धारण किया | यही कारण है कि इनकी दार्शनिक चेतना में पुराण पंथियों जैसी कट्टरता कहीं नहीं दिखाई देती |

## ४. २ सन्त नामदेव की दार्शनिक विचारधारा

महाराष्ट्रीय सन्तो की परम्परा का उदय यद्यपि सन्त ज्ञानेश्वर से माना जाता है | वारकरी अर्थात वैष्णव सम्प्रदाय के प्रधान प्रवर्तक इन्हे माना जाता है | परन्तु उत्तर भारत में भागवत धर्म की पताका लहराने वाले पहले सन्त नामदेव ही है | सन्त – दर्शन में प्राय: ब्रम्ह, जीव, जगत इन तीनों स्वरूप के साथ-साथ पारस्परिक सम्बन्धो पर ही मुख्य रूप से विचार किया जाता है | और साथ ही दार्शनिक चेतना के अन्तर्गत 'माया' नाम से एक चौथा तत्व भी स्वीकार किया जाता है | कहीं-कहीं पर मोक्ष सम्बन्धी विचार की दार्शनिक चेतना कारक स्वरूप में उभर कर हमारे सामने आते है | अत: नामदेव की दार्शनिक चेतना के अन्तर्गत इन तत्वों पर विचार करना आवश्यक है|

### ४. २.१ सन्त नामदेव का ब्रम्ह वर्णन

सन्त नामदेव महाराष्ट्र के प्रसिद्ध वारकरी सम्प्रदाय के अनुयायियो में से प्रमुख संत थे | इस कारण वारकरी सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रति पालन उनकी रचनाओं में पाया जाना स्वाभाविक है | इस सम्प्रदाय के सन्तो में निर्गुण सर्वात्म –स्वरूप अद्वैत ब्रम्ह के प्रति पूरी निष्ठा पायी जाती है, किन्तु सगुण मूर्ति के समक्ष वे कीर्तन कर भक्ति का सर्वांगीण स्वरूप को आयाम देते है |

उपनिषदों में ब्रम्ह की पूर्ण प्रतिष्ठा है | तैतीरीयोपनिषद में इस सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति, गति, पालन और स्थिति तथा इस सम्पूर्ण जगत के लाभ के कारण को ब्रम्हा कहा गया है | "ईशोपनिषेद के शांतिपाठ में कहा गया है कि 'ब्रम्ह ही पूर्ण है, सब कुछ वही है, | शंकराचार्य का कथन है – "जिसका स्वरूप सदा सर्वदा अखण्ड रूप में एक सा बना रहे वही पारमार्थिक सत्ता हो सकती है |"

ब्रम्हा के इस सर्व शक्तिमान तथा सर्वव्यापक रूप के पर्याप्त प्रमाण नामदेव के हिन्दी पदों में मिलते है | नामदेव के मतानुसार 'ईश्वर एक है जो सर्वव्यापक और सम्पूर्ण है | जिधर भी देखो वही दिखाई देता है | माया के विचित्र चित्रों में संसार मुग्ध है,और उससे दूर है जो उसमें नीहित है वहीं उसे जान पाता है | –

"एक अनेक विआपक पूरन, जत देखऊ तत सोई|

माइआ चित्र विचित्र विमोहित बिरला बुझै कोई||"

ईश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन करते हुए नामदेव कहते है – हे भगवान ! पृथ्वी के जल, थल आदि सभी स्थानों में तुम व्याप्त हो –

इभै विठलु उभै विठलु बिनु संसारु नहीं|

पान अनंतरि नामा प्रणवे पुरि रहिउ तू सरब मही||"

अपने इस सर्वव्यापी ब्रम्ह: का गुणगान करते हुए सन्त नामदेव कहते है 'हे वैकुण्ठनाथ ! तेरी लीला अगाध है | मै जिधर जाता हूँ उधर तुझे देखता हूँ जल में, थल में, नभ में, पाषाण में तू ही है | आगम, निगम, वेद, पुराण सब तेरा ही गुणगान करते है" –

तू अगाध वैकुण्ठता था| तेरे चरनौं मेरा माथा|

सेरवे भूत नाना वेषु| जज जाऊ तत्र तू ही देषु ||१||

जलधल महीथल काष्ट पाशानां|

आगम निगम सब वेद पुराना ||२||

मै मनीषा जनम निर्बंध ज्वाला|

नामा का ठाकूर दीन दयाला||३||

प्रत्येक जीव के हृदय में भगवान है | हाथी और चीटी एक ही मिट्टी के जने है | ये सब उसी भगवान के अंश मात्र है | जड-जंगम आदि सभी में ब्रम्ह समान रूप से व्याप्त है

"एकल माटी कुंजर चीटी, भाजन बहु नाना|

भावर जंगम कीट पतंगा सब घटीराम समाना||"

इस चराचर सृष्टि  का निर्माण ब्रम्ह के द्वारा हुआ है | नामदेव कहते है 'जब माँ, पिता, कर्म, काया, हम , तुम कोई न था | तब चराचर की सृष्टि  कैसे निर्मित हुई ? किसने इसकी रचना की ? इस विषय में नामदेव ने स्पष्ट कहा है कि वह परम तत्व ही ब्रम्ह है जिससे सृष्टि की व्युत्पत्ति हुई' –

माइन होती, बापु न होता करमु न शेती काझआ|

नामा प्रणवे परम ततू है सतिगुर होई लक ब्राइआ||"

नामदेव का मानना है कि जिस से सकल जीव की सृष्टि हुई है और जो हर जीव में विद्यमान है, घट घट में व्याप्त है, उसी ब्रम्हा को माया मोह के भ्रम  में  आकर  संसार ने भुला दिया है

जा मै सकल जीव की उत्पती | सकल जीव में आप जी |

माया मोह करी जगात भुलाया घटी घटी व्यापक बापजी||

## ४ .२.२ सन्त नामदेव का जीवात्मा वर्णन

मनुष्य के शरीर के भीतर एवं बाहर जिस तत्व का प्रकाश है, उसे जानने का प्रयास सदा से होता आया है | प्राचीन काल से ही मनुष्य का प्रयत्न रहा है कि यह आत्मा क्या है? उसका स्वरूप क्या है? उसकी गति-प्रगति आदि क्या है? इसका परिचय प्राप्त करे |

जीवात्मा के स्वरूप का परिचय ऋग्वेद के प्रसिद्ध मंत्र 'द्वासपुर्णा में है | जो इस प्रकार है – "सदा साथ रहनेवाले, परस्पर समान भाषा रखने वाले दो पक्षी एक ही वृक्ष का आश्रय लेकर रहते है | उनमें एक जीवात्मा उस वृक्ष के फलो का उपभोग करता है, किन्तु दुसरा फल का उपभोग न कर उसे साक्ष्य रूप में केवल देखता रहता है |"उपनिषदो में आत्म तत्व की पूर्ण प्रतिष्ठा है | यहाँ ब्रम्ह और आत्मा को ही ध्वनित किया जाता है | यह आत्मा ब्रम्ह है, सबका अनुभव करने वाला है | आचार्य शंकराचार्य ने कहा है कि "कोई भी व्यक्ति अपने अस्तित्व से इन्कार नहीं कर सकता | मै हूँ , यह वृत्ति सभी में होती है | वही ज्ञाता और वही ज्ञेय है | उसे जानने के लिए किसी ज्ञान की आवश्यकता नहीं है | वह स्वयं सिद्ध है | आत्मा आसक्ती है, अभोक्ता है और दुख से परे है | सुख दुख की समस्त प्रतिक्रियाँ, अंतकरण, शरीर आदि उपाधियों के संबन्धो के कारण है, वे आत्मा के निजी स्वरूप में नहीं है | स्वरूप लक्षण में आत्मा नित्य, मुक्त, आजन्म, निराकार, अमर, अनन्य, सर्वव्यापी तथा चैतन्य स्वरूप है |

तटस्थ लक्षण अथवा आत्मा की व्यावहारिक प्रतीति जीव होती है | अविध जीव का अज्ञान है | पूरी आत्मा जब नाम-रूप की उपाधि से युक्त होती है, तब वह जीव कहलाती है | जिसे मानव कहा जाता है | जीव वह है जो अन्तकरण आत्मा को नाम रूप की उपाधि से सिमित कर देता है, वह चैतन्य का साक्ष्य होता है, और जब वह अन्तकरण व्यक्तित्व का निर्माण करता है, तो उसे जीव कहा जाता है | जीव का सम्बन्ध शुभ-अशुभ कर्मो के फल से होता है |

सन्त नामदेव जीवात्मा को ब्रम्ह का अंश मानते है | वे कहते है कि हे माधव ! तुम ही बताओ कि तुममें और मुझमे क्या अंतर है ? भगवान से भक्त और भक्त से भगवान है | अद्वैत का यही खेल भक्त और भगवान के बीच चल रहा है | तुम्ही देवता हो, तुम्ही मन्दिर हो और तुम्ही पुजारी हो | जल से ही लहरे और लहरो से ही जल होता है, दोनों अभिन्न है | कहने सुनने में दोनो भले ही अलग हो | हे भगवान ! तुम ही गाते हो, नाचते हो और वाद्य बजाते हो | नामदेव कहते है, हे भगवन तुम मेरे स्वामी हो | तुम्हारा भक्त अपूर्ण है, तुम उसे पूर्ण करोगे |

"बहूए कोन होड माधऊ मोसिक |

ठाकूर ने जनुजन ते ठाकरु खेलू परिऊ है तोसिऊ||

आपन देऊ देहुरा आपन आप लगा वै पुजा|

जल ते तरंग तरंग ते जल है, कहन सुनन मऊ दुजा ||

आपही गावै आपहि नाचै आप बजावै तूरा|

कहत नामदेऊ तू मेरे ठाकूर जनु ऊरा तू पुरा ||"

सन्त नामदेव के अनुसार ब्रह्म सभी जीवो में समाया हुआ है | यह माया ही है जिसने सारे संसार को मोह लिया है, अन्यथा यह ब्रम्ह घट-घट में बसा है-

जा मै सकल जीव की उतपति| सकल जीव में आप जी |

माया मोह कही जगत भुलाया| घटी घटी व्यापक व्यापक बाप जी||"

जीवात्मा और ब्रम्ह की एकता एवं अद्वैतता को नामदेव कई पदों में व्यक्त करते हैं | अपने और स्वामी के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए नामदेव कहते है – हे जीव – मेरी गति तु जनता है | मै उसका क्या वर्णन करूँ ? जैसे नमक (लवण) पानी में द्रवित होने पर अलग नहीं किया जा सकता उसी प्रकार का मेरा और मेरे स्वामी का सम्बन्ध है | सत्संग से मुझे ईश्वर की प्राप्ति हुई | मेरे प्रणवत ईश्वर की वन्दना करता हूँ –

तेरी गति तू ही जानै | अल्प जीव गति कहा नै ||टेक||

जैसा तू कहिए तैसा तू नाहीं | जैसा तू है तैसा आदि गुसाई ||१||

लुण नीर ना है न्यारा | ठाकूर साहिब प्राण हमारा||२||

साध की संगती सन्त लू भेट प्रणवंत नामा राम सहेटा ||३||

### ४ .२.३ सन्त नामदेव का माया दर्शन

भारतीय दर्शन में मायावाद का विशिष्ट स्थान माना जाता है | यजुर्वेद में कहा गया है कि इन्द्र अपनी शक्ति से अनेक प्रकार के रूप धारण कर लेता है | वेदों में रूप बदलने की क्रिया को माया कहा गया है | उपनिषदों में नाम रूप के अर्थ में माया शब्द का प्रयोग हुआ है | कंठोपनिषद में लिखा है, 'आत्मा – स्वरूप परम पुरुष सब प्राणियों में रहता हुआ भी माया के पर्दे में छिपा रहने के कारण सब को प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देता | केवल सूक्ष्म तत्वों को समझने वाले पुरुषों द्वारा ही सूक्ष्म तथा तीक्ष्णबुद्धी से उसे देखा जाता है | श्वेताश्वेतर उपनिषद में कहा गया है कि सम्पूर्ण जगत को माया का अधिपति परमेश्वर पांच महाभूतादी से रचता है तथा दूसरा जीवात्मा उस प्रपंच में माया के द्वारा भलिभांति बंध हुआ है | अन्य उपनिषदो में नानारूपात्मक जगत, अविधा, भ्रम तथा प्रकृति को माया कहा गया है |

गीता में माया को कृष्ण की शक्ति कहा गया है | गीता का कथन है – "मेरी यह गुणमयी और दिव्य माया दुस्तर है | इस माया को वे ही पार कर पाते है: जो मेरी शरण में आते है | गीता में माया को अविधा, भ्रम तथा प्रकृति रूप कहा गया है |

माया का शास्त्रीय ढंग से विवेचन आचार्य शंकराचार्य ने किया | कालान्तर में मायावाद मध्यकालीन दर्शनशास्त्रीयों के लिए एक आवश्यक तत्व हो गया | माया का अर्थ है ईश्वर की विचितार्थ संगकरी (अद्भुतविषय की सृष्टी करनेवाली शक्ति| द्वैत, द्वैताद्वैत तथा शुद्धाद्वैत आदि सभी दर्शनो ने मायावाद को स्वीकार करते हुए ब्रम्ह की शक्ति के रूप स्वीकारा है |

सन्त नामदेव ने भी अपनी रचनाओं में माया का वर्णन किया है | उनके मतानुसार माया ही जीव को ब्रम्ह से विमुख करती है | कोई विद्वान व्यक्ति गुरु उपदेश द्वारा माया के प्रभाव से बचकर ब्रम्ह तक पहुँच सकता है | नामदेव कहते है – "हे विठ्ठल ! तेरी माया बहुत ही प्रबल

है| पहले से ही वह भक्तों को भृमित करती  आयी है | पर्याय यह है कि माया के प्रबल हो जाने पर ब्रम्ह तथा ब्रम्ह के प्रबल हो जाने पर माया दृष्टिगोचर नहीं होती –

“कीहौ कीहौ तेरी सबळ माया| आगै इति अनेक भरमाया||

माया अंतर ब्रम्ह न दी सै| ब्रम्ह के अंतर माया नहीं ही तै सेत||”

माया के दो रूप है | एक अविधा माया तथा दूसरा विधा माया |  अविधा माया के वशीभूत होकर जीव संसार के मोहजाल में फँस जाता है | अविधा माया, सब गुण जिस के वश में है और जो ईश्वर की प्रेरणा से ही संसार की रचना करते है, जीव को संसार के मोहजाल से छुडा कर ब्रम्ह की भक्ति की ओर ले जाते है | संत नामदेव का मानना है कि जीव का गर्भयोनि में आना ही माया है, यदि वह छूट सके तो परमात्मा के दर्शन हो सकते है | नामदेव कहते है कि अब यह माया मुझसे नहीं लिपटेगी, मै इस संसार से मुक्त हो जाऊँगा –

“इह संसार ते सब ही छुटउ नउ माइया नहीं लपटावउ|

माइआ नामू गरभ जोनि का तिह तजि दरसन पालउ||”

माया के वश में होनेवाला प्राणी ईश्वर को भूल जाता है और अपने ही अज्ञान में रहता है | नामदेव कहते है कि माया वस्तुत: जीव मात्र को मुग्ध कर देती है | इससे उसका रहस्य जान सकना कठिन है | इसी कारण माया को अनिर्वचनीय कहा जाता है –

“माइआ चित्र विचित्र विमोहीत विरला बूझै कोई|

सभी सन्तो ने माया को भक्ति में बाधक माना है | सन्त नामदेव कहते है – “हे माधव ! यह माया तुम्हारी भक्ति में बाधा डालती है | वह भक्तों को तुमसे मिलने  नहीं देती –

माधीजी माया मिलन न देई | जन जीवै तो करै सनेही |”

नश्वर संसार की निस्सारता और माया जाल के धोखे में पडे लोगों को सचेत करते हुए नामदेव कहते – यह संसार धोखे और मायाजाल से भरा है | धन,यौवन, पुत्र तथा स्त्री को तु अपना समझ | ये रेत के मंदिर के समान नष्ट हो जाएँगे” –

“यहु ममिता अपनि जिनी जानौ| धन जोबन सूट द्वारा|

बालू के मंदिर बिनसी जाहिंगे| झुठे बरहू पसारा|

### ४ .२.४ सन्त नामदेव का जगत वर्णन

सभी प्रकार की प्रतीतियों का नाम जगत या संसार है | समस्त जगत या इसके प्रत्येक विषय को एक-या  अन्तिम सत्य या पारमार्थिक सत्य नहीं कह सकते | जगत जब नाम रूपात्मक ही किया जाता है तब वह केवल व्यावहारिक दृष्टि से सत्य है या यों कहे कि प्रतिभासिक सत्ता की अपेक्षा अधिक सत्य है और पारमार्थिक सत्ता की अपेक्षा कम सत्य|

व्यावहारिक ज्ञान के लिए जगत वास्तविक है | मनुष्य जब इसी में उलझ जाता है और माया में फँसकर पारमार्थिक सत्य को भूल जाता है, कि यह जगत दु:खमय है, और असत्य भी है |

अपरा विद्या की दृष्टि से जीव और जड पदार्थ अनेक दिखाई पडते है | इनके बिना संसार का चलना कठिन है | यही व्यावहारिक ज्ञान है | व्यावहारिक ज्ञान अथवा जगत व्यवहार के लिए जगत व्यवहार के लिए जगत वास्तविक है, किंतु इसे हम पारमार्थिक सत्य नहीं मान सकते | पारमार्थिक सत्य तो ब्रम्ह ही है | जगत परिवर्तनशील तथा विनाशशील है, इस का नाश हो जाता है, अत: यह अबाधित तत्व नहीं है और इसीलिए उसे सत्य नहीं कहा जा सकता, किंतु इंद्रियाँ अध्यारोप के सहारे उसमें अपने विषयों का आरोप कर लेती है, अत: वह अत्यन्त आकर्षित प्रतीत होणे लगता है" यद्यपि तात्विक दृष्टि से यह असत्य है, मिथ्या है |

ब्रम्ह स्वरूप जगत (विश्व) का वर्णन करते हुए नामदेव कहते है "माधव रुपी माली सयाना है | वह आप ही बगीचा है तथा आप ही माली है | वह आप ही पानी है और आप ही पवन है | वह स्वयं से प्रेम करता है | वह स्वयं ही चन्द्र तथा स्वयं ही सूरज है, आप ही धरती तथा आकाश है, जिस सृष्टिकर्ता ने इस प्रकार सृष्टि की रचना की, नामदेव उसका दास है |"-

"माधौ माली एक सयाना| अंतरिगत रहैलुकानां ||टेक||

आपै सडी आपै माली कली कली कर जोडै |

पाके, काचे, काचे पाके, मनि मानै ते तोडे ||१||

आपै पवन आप ही पानी, आपै करिषै मेहा |

आपै पुरिष चरि पुनि आपै, आपै नेहु सनेहा ||२||

आपै चंद सूर पुनि आपै, आपै धरनि अकासा |

रचना हार विधि ऐसी रची है, प्रण मै नामदेव दासा ||३||

यह संसार ब्रम्हा की लीला है | नामदेव ब्रम्ह और जगत की अभेदता का वर्णन इस प्रकार करते है – 'तरंग, फेन और बुदबुदा जैसे जल से भिन्न नहीं है, वैसे ही यह प्रपंच (संसार) ब्रम्ह की लीला है और उससे अभिन्न है | इस संसार में जीव के रूप में ईश्वर के अतिरिक्त कोई अन्य विचरण नहीं करता है |

"जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिन्न न कोई |

इहू परपंचू पारब्रम्ह की लीला विचरत आन न होई ||"

### ४.२.५ सन्त नामदेव का लौकिक जीवन विषयक दृष्टिकोण

मनुष्य को अपना ऐहिक जीवन किस प्रकार व्यतीत करना चाहिए, इस विषय में सन्त नामदेव ने जो विचार व्यक्त किये है, उन्हें एक पारमार्थिक व्यक्ति का प्रकट चिन्तन समझना समीचीन होगा | उसमें भौतिक जीवन का केवल सुखोपभोग पक्ष व्यक्त नहीं हुआ है | नामदेव

का यह ऐहिक तत्व विचार अंधेरे में टटोलने वाले साधकों के लिए मानो उनके द्वारा लगाया ज्ञानदीप है | अत: नामदेव के ऐहिक तत्व चिन्तन में अन्तर्भूत उपदेशों का विशेष महत्व है |

सन्त नामदेव मनुष्य जन्म को मोक्ष प्राप्ति के लिए दुर्लभ जन्म मानते है | उनका कथन है – जन्म-जन्मान्तर के बाद नर-देह मिला है | दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर भी यदि तूने ईश्वर भक्ति नहीं की तो तुझे पुन: माया से परे रहना होगा | अत: सुखोपभोग के विषयों का त्याग कर आत्माराम में मन लगाओ | यह कार्य गृहस्थी को सँभालते हुए भी हम कर सकते है निरंतर नाम-स्मरण करके ईश्वर की भक्ति का मार्ग सुगम बना सकते है |" –

"शेवटीली पाली तेव्हा मनुष्य जन्म| चुकलिया वर्म फेरा पडे ||

एक जन्मी ओळखी करा आत्माराम | संसार सुगम भोगू नका ||

संसारी असावे असोनी नसावे | कीर्तन करा रे वेळोवेळी ||

यह संसार नाशवान है | इस जीवन का अन्त एक न एक दिन होने वाला है, इसलिए इस भवसागर को पार करना आवश्यक है | संत नामदेव कहते है कि इस नश्वर संसार से मेरा मन उब गया है | काल (मृत्यू का यमराज) मेरे सामने उपस्थित है और वह मुझे अपना निवाला (ग्रास) बनाना चाहता है –

नामा म्हणे थोर उबगलो संसारा |

काल बैरी पुढारा ग्रास पाहे ||

इस दु:खपुर्ण संसार से ऊब कर नामदेव अपने आराध्य विठ्ठल से अनुरोध करते है कि – "हे विठ्ठल ! तूने मुझे भवसागर में ढकेल तो दिया अर्थात जन्ममरण के फेरे में फँसा तो दिया लेकिन अब इस भवसागर से पार करा दे अर्थात जन्म-मृत्यू के बीज अज्ञान को जड से नष्ट कर दे |

"नामा म्हणे नको पाहो माझी त्याज |

संसाराचे बीज मूल खुडी ||

## ४ .३ सारांश

यद्यपि हम नामदेव को दार्शनिक के रूप में नहीं देखते किंतु फिर भी दर्शन के क्षेत्र की अनेक ऐसी बातों पर उन्होंने विचार किया है और अपना मत भी स्पष्ट किया है | इसीलिए उनके दर्शन के सन्दर्भ में भी सोचना आवश्यक हो जाता है | उन्होंने कभी दार्शनिक बनने की चेष्टा नहीं की थी, किन्तु उनकी अध्यात्म प्रियता ने उन्हें दार्शनिक बना दिया है | नामदेव ने सत्य का पूर्ण अनुभव किया था | उनका दर्शन उसी स्वानुभूतिमूलक सत्य की अभिव्यक्ति है | उन्होंने हिंदूधर्म के अद्वैत सिद्धान्त, वैष्णव सम्प्रदाय की भक्तिमयी उपासना, कर्मवाद, जन्मान्तरवाद, अहिंसा, मध्यम मार्ग, इस्लाम धर्म से एकेश्वरवाद, मातृभाव आदि को लेकर एक सारग्रही सर्वग्राह्य पंथ चलाने का प्रयास किया था | नामदेव की दार्शनिक विचारधारा को पहले से चली आ रही विभिन्न मान्यता के संकीर्ण घेरे में नहीं रखा जा सकता | उसमें

उनके विचारों में नवीनता है और अनेक प्रभाव को स्वीकार करते हुए उसकी एक निजी सत्ता है, एक पृथक अस्तित्व है |

सन्त नामदेव मानवप्रेमी और मानवताप्रेमी महापुरुष थे | विठ्ठल में अटूट विश्वास के कारण नर में नारायण की प्रवृत्ति ने उन्हे मानवतावाद की ओर उन्मुख किया था, इसीलिए कभी किसी मानव से उन्होंने घृणा या द्वेष का व्यवहार नहीं किया | नर में नारायण को देखने के कारण ही उनकी दृष्टि सच्ची आस्तिक भावना से ओतप्रोत हो गई थी | संक्षिप्त में हम कह सकते है कि नामदेव का ब्रम्ह निर्गुण ब्रम्ह है, जीवात्मा उसका अंश है जो माया के विकार में जब फँस जाता है, तब नश्वर, असार, मिथ्या जगत को भी सच्चा समझने लगता है, वैसा वह स्वयं होता है, भ्रमात्मक यह भ्रम मायावश ही होता है | अन्यथा जीव में परमात्मा का अंश शुद्ध रूप में होता है और उसी में मिल जाता है, जब वह आत्मा को पहचान लेता है |

## ४. ४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

1) सन्त नामदेव के दार्शनिक विचारों पर प्रकाश डालिए |
2) नामदेव ने कभी भी दार्शनिक बनने की चेष्टा नहीं की थी, किन्तु उनकी अध्यात्मप्रियता ने उन्हें दार्शनिक बना दिया है, इस कथन का विश्लेषण कीजिए |
3) नामदेव के ब्रम्ह, जीव, माया और जगत सम्बन्धी विचारों को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए |

## ४.५ लघुत्तरी प्रश्न

1) दर्शन का सम्बन्ध प्राय: किसके साथ रहा करता है ?
2) वारकरी सम्प्रदाय के प्रधान प्रवर्तक किसे माना जाता है ?
3) उत्तर भारत में भागवत धर्म की पताका फहराने का श्रेय किसे दिया जाता है ?
4) नामदेव के अनुसार संसार ने किसके कारण ब्रम्ह को भुला दिया है ?
5) जीवात्मा के स्वरूप का परिचय किस वेद में दिया गया है ?
6) उपनिषदों में किसकी पूर्ण प्रतिष्ठा है ?
7) आत्मा कब जीव कहलाता है ?
8) सन्त नामदेव जीवात्मा को किसका अंश मानते है ?
9) गीता में किसको कृष्ण की शक्ति कहा गया है ?
10) माया का शास्त्रीय ढंग से विवेचन किसने किया ?
11) नामदेव के अनुसार कौन जीव को ब्रम्ह से विमुख करता है ?
12) माया के दो रूप कौन से है ?
13) नामदेव ब्रम्ह और जगत की अभेदता का वर्णन कैसे करते है ?
14) नामदेव मोक्ष प्राप्ति के लिए क्या करने का उपदेश देते है ?
15) नामदेव अपने आराध्य विठ्ठल से क्या अनुरोध करते है ?

## ४.६ सन्दर्भ ग्रंथ

1) सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली, सं. भगीरथ मिश्र, राजनारायण मौर्य, पूना विश्वविद्यालय, पूना, प्र.सं. १९६४

2) हिन्दी को मराठी सन्तो की देन, विनय मोहन शर्मा, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, ३,मार्च १९५७

3) हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त काव्य, डॉ.प्रभाकर माचवे, चौखम्बा विधाभवन, वाराणसी, प्र. सं. १९६२

4) उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, परशुराम चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयाग राज-०१, पुनर्मुद्रण २०२०

5) हिन्दी निर्गुण काव्य का प्रारम्भ और नामदेव की हिन्दी कविता, डॉ. शं.के.आडकर रचना प्रकाशन, इलाहाबाद-१, प्र.सं.१९७२

6) मराठी सन्तो की हिन्दी वाणी, सं. आनन्द प्रकाश दीक्षित, पंचशील प्रकाशन, जयपूर-०३, १९८३.

7) महाराष्ट्र के सन्तो का हिन्दी काव्य, प्रभाकर सदाशिव पण्डित, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, प्र.सं. १९९१

8) सन्त काव्य पं. परशुराम चतुर्वेदी, किताब महल, इलाहाबाद, सं. २०१७.

9) सन्त नामदेव, कृ.गो.वानखेडे (गुरुजी, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, प्र.सं. १९७०.

10) पांच संत कवि, डॉ. श.गो.तुलपुले, व्हीनस प्रकाशन, पुणे, प्र.सं. १९६२.

❖❖❖❖

# ५

# सन्त नामदेव की भक्ति भावना

**इकाई की रूपरेखा**


५. ० इकाई का उद्देश्य

५. १ प्रस्तावना

५.२ नामदेव की भक्ति भावना

- ५.२.१ निर्गुण सगुण की एकता
- ५.२.२ अद्वैत पूरक भक्ति भावना
- ५.२.३ ज्ञानोत्तर भक्ति
- ५.२.४ नाम प्रेम की पराकाष्ठा
- ५.२.५ गुरु कृपा का महत्व
- ५.२.६ सत्संगति का महत्व
- ५.२.७ वात्सल्य भाव की प्रधानता

५. ३ सारांश

५. ४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

५. ५ लघुत्तरीय प्रश्न

५. ६ सन्दर्भ ग्रन्थ


## ५. ० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत सम्मिलित की गई विषयवस्तू के अध्ययन से अध्ययनकर्ता को निम्नलिखित जानकारियाँ देने का उद्देश्य है –

अ) सन्त नामदेव की भक्ति भावना का परिचय कराना एवं

आ) सन्त नामदेव के विठ्ठल भक्ति विषयक विचारो की जानकारी देना|

## ५.१ प्रस्तावना

भक्तिमार्ग का प्रमुख सम्प्रदाय भागवत धर्म है, जिनका अविर्भाव साल १४०० ई.पु. के आसपास माना जाता है | सर्वप्रथम महाभारत के शांतिपर्व में एकांतिक अथवा भागवत धर्म की उत्पत्ति की प्रथा मिलती है | नर और नारायण नामक दो ऋषियों का मानना है कि उत्तर भारत में पल्लवित हुई इस विचारधारा में बौद्ध तथा उनसे विकसित वज्रयान, सहजयान आदि के द्वारा जब अवरोध उत्पन्न हुआ तो भागवत धर्म के प्रचारक दक्षिण भारत के

राजाओ के आश्रय में चले गये | दक्षिण में अलवार भक्तों के गीतो में इसी भावना की साहित्यिक अभिव्यक्ति है | इनके भावपूर्ण गीत प्रबन्धक में संग्रहित है | नवी-दसवी शताब्दी से तमिल प्रदेश में ही भक्ति का शास्त्रीय प्रतिपादन करनेवाले आचार्यो का भी उदय होने लगा | कारण यह था कि आचार्य शंकर ने अद्वैतवाद का उपस्थापन ऐसे तर्को के आधार पर किया जिनसे भक्ति का पूर्ण सामंजस्य नहीं हो पाता था | आचार्यो की इसी परम्परा में यामुनाचार्य (आलवंद्वारा हुए जिन्होने शंकर के मायाबाद  का खण्डन कर विशिष्ट द्वैत सिद्धांत और विष्णू की श्रेष्ठता का समर्थन किया और भागवत धर्म की प्रामाणिकता की स्थापना की किन्तु इस दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रयास श्री रामानुजाचार्य (ग्यारहवी शताब्दी का है जिन्होने ब्रम्हसूत्र पार श्रीभाष्य की रचना कर भक्ति तथा प्राप्ति (शरणागती) भावना सो हम शास्त्रीय आधार दिया |

जो भी हो बारहवी, तेरहवी शताब्दी तक भक्ति आन्दोलन दक्षिण में पूर्ण प्रौढ होकर पुन: उत्तर की और अग्रसर हुआ | महाराष्ट्र में आकर ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम आदि के माध्यम से इसका संघटन गोरखनाथी योग धारा से हुआ जिसको इसने आत्मसात किया |

**भक्ति क्या है?**

व्युत्पत्ति की दृष्टि कोशाकारो ने भक्ति के अनेक अर्थ बतायें है – सेवा, आराधना, श्रद्धा अनुराग, विभाव आदि | किन्तु भक्ति के शास्त्रीय ग्रंथो  तथा पुराणो में इसका पर्याय  एक विशिष्ट अर्थ में होता है | भक्ति के प्राचीन ग्रंथो में श्रीमद्भगवतगीता, महाभारत शांतिपर्व, पांचराज संहिता, शांडिल्य भक्तिसूत्र, नारद भक्तिसूत्र, भागवत पुराण, हरिवंश पुराण तथा रामानुजाचार्य आदि के ग्रन्थ प्रमुख है | इनमे श्रीमद्भागवत पुराण का स्थान बहुत ऊँचा है, क्योंकि अधिकांश आचार्यो ने प्रमाण स्वरूप  इसका बार-बार उल्लेख किया है | भागवत में एक स्थान पर ऋषि व्यास ने कपिल के मुख से भक्ति की सारगर्भित व्याख्या सराई है| उनके अनुसार वेदविहित कार्य में लगे हुए जनो की भागवत के प्रति अनन्य भावपूर्वक स्वाभाविक सात्विक प्रवृत्ति का नाम भक्ति है | जिस प्रकार गंगा की धारा अखण्ड रूप से समुद्र की ओर बहती है उसी प्रकार सर्वातयामी भगवान के गुणश्रवण मात्र से प्रादुर्भूत उनके प्रति अविच्छित मनोगति को भक्ति कहते है |  (भागवत ३/२५/३२ तथा ३/२९/११-१२)

शांडिल्य ने अपने भक्तिसूत्र में भक्ति का शास्त्रीय और संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया है | वे ईश्वर विषयक परानुराक्ती को भक्ति मानते है – “सा परानुराक्तिरीश्वरे |” उनके टीकाकार नारायण तीर्थ ने बतलाया है कि प्रीती और भक्ति में कोई भेद नहीं | पराकाष्ठा पर पहुँची हुई भागवत प्रीति ही भक्ति है | नारद के अनुसार भी ईश्वर के प्रति परम प्रेम ही भक्ति है – सा-तस्मिन परम प्रेम रूपा | उपनिषदो और महाभारत का प्रमाण देते हुए श्री रामानुजाचार्य ने भक्ति के स्वरूप की दार्शनिक व्याख्या प्रस्तुत की है जिसके अनुसार स्नेहपूर्वक किया गया अनवरत ध्यान भक्ति है – स्नेहपूर्व अनुध्यानं भक्तिरित्थुच्यते बुवै: | उन्होंने भक्ति को ज्ञान से उच्चतर प्रतिष्ठित किया |

इस प्रकार हम देखते है, कि सभी ने भक्ति के  प्रेमरुप तथा शरणागति या प्राप्ति पर विशेष बल दिया है | अत: पूर्ण निष्ठा के साथ भगवान की शरणागति, बिना शर्त भगवान के प्रति आत्मसमर्पण का भाव – यही भक्ति की पहली और आन्तिक शर्त है |

## ५.२ नामदेव की भक्ति भावना

महाराष्ट्र के सन्तो की वास्तविक साधना निर्गुण भक्ति की प्रतीत होती है | परंतु उनकी रचनाओं में जो कुछ उदाहरण सगुण भक्ति के मिलते है वे इसके लिए किये गये प्रारम्भिक प्रयोगो जैसे जान पड़ते है तथा केवल उसी दृष्टि से उसका अपना महत्व भी हो सकता है | संत नामदेव सम्पूर्ण के काव्य का अध्ययन करने के पश्चात यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनके हिन्दी पदो में उनका निर्गुण उपासक भक्त का रूप दिखाई देता है तो मराठी अभंगो से यह स्पष्ट होता है कि सगुणोपासना को भी उन्होने अपनाया था | परमात्मा ही एकमात्र सबकुछ है और यही सबके भीतर तथा बाहर सर्वत्र व्याप्त है, तथा उसी के प्रति एकान्तनिष्ठ होकर रहना चाहिये इसी को वे अपने जीवन का परमार्थ मानते थे |

### ५.२.१ निर्गुण-सगुण की एकता

वारकरी सम्प्रदाय को भगवान के दोनों रूप सगुण तथा निर्गुण मान्य है | पूर्ण सगुणोपासक होने पर भी यह चिर परमात्मा को व्यापक एवं निर्गुण निराकार भी मानता है | निर्गुण-सगुण की एकता को सन्त नामदेव सुवर्ण तथा सुवर्ण से बनी अशरफी के दृष्टांत द्वारा प्रमाणित करते है | वे कहते है कि "जो सगुण तथा निर्गुण दोनो से परे है, जिसका कोई आकार नहीं वही साकार होकर प्राप्त होता है | जल से जैसे बर्फ बनी है उसी प्रकार निराकार पांडुरंग (ब्रम्ह) साकार होता है| जिस प्रकार सुवर्ण तथा उससे बनी अशरफी अभिन्न होते है, उसी प्रकार निर्गुण तथा सगुण एक ही ब्रम्ह के दो रूप है | पांडुरंग (विठ्ठल) ही संसार है और संसार ही पांडुरंग है |" –

'निर्गुण सगुण नाही ज्या आकार| होऊनी साकार तोचि ठेठा |

जली जलगार दिसे जैसा परी| तैसा निराकारी साकार हा |

सुवर्ण की घन, घन की सुवर्ण| निर्गुणो सगुण ययापरी ||

पांडुरंगी अंगे सर्व भासे जग | निनवी सर्वांग नामा म्हणे ||

आकार के कारण मूल वस्तू से भिन्न कोई अन्य वस्तू निर्मित हुई है ऐसा आभास होता है | इसे दूर करने के लिए नामदेव किर्तनवाद का दृष्टांत देते हुए कहते है – एक ही तत्व एकाकार रूप से सारे संसार में व्याप्त है | वही सारे संसार का संचालन करता है | इस एकमात्र ब्रम्ह की हमे प्राप्त करनी चाहिये | उससे भिन्न आभासमान होने वाला संसार माया से व्याप्त है, अत: मिथ्या है | -

एक तत्व एकाकार सर्व देखी | एक तो नेमेसी सकल जगी ||

ऐसे ब्रम्ह पहा आहे सर्व एक | न लगे विवेक करणे काही ||

मिथ्या हे डंबर माया ममितार्थ | हरि हाचि स्वार्थ वेगी करी ||

नामा म्हणे समर्थ बोलीला तो वेद | नाही भेदाभेद ब्रम्हपणी ||

वेदो में भी कहा गया है कि सर्व खाविंद ब्रम्ह या एके सत विप्रा बहुधा वन्दति | सन्त नामदेव ने अद्वैत सम्बन्धी इन वैदिक सिद्धांत का उद्घाटन अपनी भक्ति में किया है | निर्गुण – सगुण के अद्वैत सिद्धांत को मृगजल के दृष्टांत द्वारा पुष्ट करते हुए नामदेव कहते है – ब्रम्ह में ब्रम्ह के अतिरिक्त और कुछ नहीं है | चिन्मय परमात्मा से भिन्न आभासमान होनेवाला संसार मायिक है | मृगजल का जैसे वास्तव में कुछ अस्तित्व नहीं होता, उसी प्रकार जड विश्व का भी वास्तव में अस्तित्व नहीं है | ब्रम्ह स्वरूप अद्वैत की बात श्रवण करो और उसी आत्म स्वरूप में तल्लीन हो जाओ |

भक्तों में ज्ञानी भक्त श्रेष्ठ होता है | नामदेव ज्ञानी भक्त थे, इसीलिए वे भक्त शिरोमणि हो गये | यदि वे केवल आर्त भक्त होते तो उनको यह उपाधि कतई न मिलती | विठ्ठल के सगुण रूप की भक्ति करते हुए भी उसके मूल निर्गुण रूप से उनका मन यत्किंचित भी विचलित नहीं हुआ | पंढरपूर के पांडुरंग की मूर्ति की यह विशेषता है कि वह परात्पर निर्गुण ब्रम्ह की प्रतीक है, किसी एक साम्प्रदायिक देवत्व की नहीं |

### ५.२.२ अद्वैतपरक भक्ति भावना

महाराष्ट्रीयन सन्तो की यह विशेषता है कि वे द्वैतभाव को नहीं मानते थे और अद्वैत भाव की भक्ति में लीन रहते थे | आचार्य परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार अद्वैत मत का प्रभाव सर्वाधिक वैष्णव सम्प्रदायों में वारकरी सम्प्रदाय पर अधिक रहा है | अपने इस मत के सन्दर्भ में वे कहते है – 'ईश्वराद्वयवाद की इस अपूर्व अद्वैतपरक भक्ति का ही प्रभाव कदाचित उस वैष्णव सम्प्रदाय पर किसी न किसी प्रकार पड़ता था जो पंढरपूर नामक स्थान के आसपास विक्रम की १३ वी शताब्दी में प्रचलित हुआ था, जिसके प्रवर्तक ज्ञानेश्वर माने जाते है और जो आज वारकरी सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है |

सगुणोपासक नामदेव को अद्वैत की अनिर्वचनीय प्रचीति होने पर आप-पर भाव (मै – तू का भाव) विनष्ट हो गया | अपनी इस अनुभूति का वर्णन नामदेव इस प्रकार करते है – 'यदि तू लिंग है तो मै सालुंका हूँ | यदि तु तुलसी है तो मंजरी हूँ | वास्तव में स्वयं दोनो ही अर्थात तू और मै (इष्ट देव और भक्त) दोनो में तू ही विराजमान है |

तू अवकाश मी भूमिका | तू लिंग मी सालुंका ||

तू समुद्र मी द्वारका | स्वये दोन्हीं ||१||

तू वृन्दावन मी चिरी | तू तुलसी मी मंजिरी |

तू पावा मी मोहरी | स्वये दोन्ही ||२||

नामदेव को अपने गुरु विसोबा खेचर से अद्वैत भेद होने पर सर्वनारायण हरि दिसे' की प्रतीति प्रत्येक क्षण होने लगी | इसी अनुभूति के बल पर वे अद्वैतनिष्ठ भक्ति योग का सांगोपांग अविष्कार (वर्णन) अपने अभंगो से करने लगे | वे कहते है कि भक्ति के बहाने निर्गुण ने विठ्ठल के रूप में सगुण रूप धारण कर लिया है | विठ्ठल का यह रूप नामरुपायित है | यह ब्रम्ह ज्ञानरूप है , सगुण तथा निर्गुण दोनो से परे है | उनका वर्णन करते हुए वेद भी मौन हो जाते है जो श्रुतियों के लिए भी दुर्बोध है, पुराणो से भी इसका वर्णन नहीं हो सकता |

गुरु विसोबा खेचर ने नामदेव को निर्गुण की अनुभूति दिलाकर निर्गुण परब्रम्ह ही के विश्व रूप में सगुण होने का अन्वयात्मक ज्ञान दिया | उन्होने नामदेव से कहा कि अन्वयात्मक विचार से तु ऐसे स्थान से मुझे गैर रख जहाँ परमात्मा नहीं है –

"जेथे देव नसे तेथे माझे पाय | देवी वा अन्वय 'विचारोनी' | यह अन्वयात्मक ज्ञान होने पर नामदेव को अनुभूति हुई कि कोई स्थान परमार्थ से रिक्त नही है | वह सारे संसार में समाया हुआ है |-

"नामा पाहे अवघा जिकडे तिकडे देव |

रोटे रिता मात्र न ठिसेचि ||"

"सभु विविन्दु है सभु विविन्दु वितु नहीं कोई |

सुतु हाक मणि सत साहस जैसे उति पोति प्रभू सोई |

कहत नामदेउ हरि की रचना देखउ हिहै बीचारी |

घट घट अंतरि सर निरंतरि केवल एक मुरारी ||

### ५.२.३ ज्ञानोत्तर भक्ति

गीता में कहा गया है कि 'ज्ञानी सबके आत्म स्वरूप निर्गुण परब्रम्ह का साक्षात्कार होने पर भी भावुकतापूर्ण अंत:करण से तथा निष्काम बुद्धि से ईश्वर के सगुण रूप की भक्ति करते है | सन्त नामदेव ने अमरण इस ज्ञानोत्तर भक्ति जीवन में प्रयोग किया और उसका प्रचार भी किया | उनके दीक्षा गुरु विसोबा खेचर ने उनको यही उपदेश दिया था | नामदेव कहते है – चन्द्रभागा नदी के किनारे बसा पंढरपूर ही मेरा तीर्थस्थान है, क्योंकि यहाँ अदृश्य, अव्यक्त, निर्गुण परब्रम्ह का निधान विठ्ठल के रूप में सदैव मेरे सामने रहता है | पहले भी महान भक्तों ने यहाँ ;निधान प्राप्त किया था" विसोबा खेचर ने नामदेव को निर्गुण ब्रम्ह की अनुभूति कराई थी | निर्गुण की अनुभूति होने पर विसोबा खेचर ने नामदेव के सगुण रूप विठ्ठल की भक्ति करने का उपदेश दिया था | इसका कारण यही है कि विठ्ठल परब्रम्ह के प्रतीक है |

परमात्मा ज्ञान की प्राप्ति के कारण नामदेव को मुक्ति तो मिल गई थी लेकिन "ज्ञानादेवतु कैवल्यम" अर्थात केवल ज्ञान के कारण प्राप्त होनेवाली (केवल परब्रम्ह रूप होकर रहने की) कैवल्य मुक्ति को वे नहीं चाहते थे | क्योंकि मुक्ति प्राप्त होने पर भी नामदेव भक्ति – सरिता में अवगाहन करना चाहते थे |

नामदेव ने अपने अनेक अभंगो में परमात्मा के निर्गुण परक ज्ञान से मुक्ति का तथा उसके साथ सगुण – स्वरूप भक्ति का वरदान माँगा है | नामदेव यह स्वीकार करते है कि "अन्त:करण में तेरा निर्गुण, निराकार तथा अव्यक्त रूप और तेरा सगुण साकार व्याप्त रूप देखकर मेरा मन उन्मत्त हुआ | सन्तो की कृपा से तेरी आंतर्बाह्य व्यापकता मुझे प्रतीत हुई और मुझमें परिवर्तन हुआ |

भक्तो में ज्ञानी भक्त सर्वश्रेष्ठ होता है | वह अपने व्यक्तित्व के साथ अपना सर्वस्व परमात्मा को समर्पण करने के कारण ईश्वर रूप हो जाता है, उससे भिन्न नहीं रहता | भक्ति की यह

चरम सीमा है | एकरूपता का यह आनन्द अनुभूति से सम्बन्ध रखता है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता | नामदेव इस स्थिति का वर्णन करते हुए कहते है – 'मै अब उस अवस्था को पहुँच गया हूँ, जहाँ पहुँच कर मेरी भक्ति का आलम्बन पंढरीनाथ विठ्ठल हुआ है | मै ही अपना भक्त हो गया हूँ | बन्धन और मोक्ष केवल मायाजाल है ,कल्पना है | पंढरीनाथ की कृपा से मुझे इस सत्य का साक्षात्कार हुआ | अब मै हरि का दास हो गया हूँ | हरि का दास होने का अभिप्राय है, भक्तित्व हरि के व्यक्तित्व में विलीन कर देना | इस अवस्था में ईश्वर और भक्त का द्वैत नहीं रहता | यही ज्ञानोत्तर भक्ति है |

### ५.२.४ नाम – प्रेम की पराकाष्ठा

वारकरी सम्प्रदाय पूर्णत: वैदिक है | नारद भक्ति सूत्र में दिए गये भक्ति के नौ प्रकार इस सम्प्रदाय को मान्य है | परंतु उन सब में नामस्मरण तथा कीर्तन को अधिक महत्व दिया गया है | मुख से विठ्ठल नाम का उच्चारण, कंठ में तुलसीमाला और एकादशी का व्रत ये तीन इस सम्प्रदाय के मान्य सिद्धांत है | एकादशी का व्रत रखकर भगवान का स्मरण तथा कीर्तन करने का विधान प्रत्येक वारकरी को है | भक्ति में नाम साधना का बड़ा महत्व है | तुलसी ने राम नाम की व्याख्या इस प्रकार की है - "राम एक तामस तीय तारी | नाम कोटी खल कुमती सुधरी ||" कहकर इसका महत्व प्रतिपादित किया है | लेकिन नाम महात्मा के सगुण भक्ति संस्करण के पहले सन्त नामदेव ने इसकी भूमी तैयार कर दी थी | नामदेव ने नाम-साधना को बहुत अधिक महत्व दिया था |

हरीनाम की महिमा अपार है | यही तो इस विश्व में एक तत्व है | नामदेव कहते है – हरि का नाम सारे संसार का सार है | मैने हरीनाम रुपी नाव से भवसागर को पार किया –

हरि नाव सकल भुवन तत सारा |

हरि नाव नामदेव उतरे पारा ||

हरिनाम ने संसार में असाधारण नाम लिया है | नामदेव कहा है – हरि का नामस्मरण करने से कमला श्री विष्णू की दासी हो गई, शंकर अविनाशी हुए, ध्रुव को अटल स्थान प्राप्त हुआ और प्रल्हाद का उद्धार हुआ |

"हरि नाव में निज कवला दासी | हरि नावे संसार अविनासी ||

हरि नाव में निश्चल करिया | हरि नाव में प्रल्हाद उघरिया ||हरि का नाम लेने से सबका कलंक दूर हो जाता है | मुख से राम कहते ही उसके स्मरण मात्र से प्राणी मात्र का उद्धार हो जाता है | नाम के महत्व को देखकर नामदेव कहते है कि राम नाम रुपी पुंजी में मैने अपना सब कुछ लगा दिया | मुझे रामनाम की लगन लगी | मै उससे अनुरुक्त हुआ –

रामनाम मेरी पुँजी धना | ता मुंजी मेरौ लागौ मना ||

नामदेव ने अपने मन को पूर्णत: नाम पर केन्द्रित किया था | वे रामनाम की खेती में लगे थे | इस धन को न कोई चोर ले जा सकता था न इसे काई इस पर अपना अधिकार जता सकता है | नामदेव कहते है –

राम नाम घेती राम नाम बारी | रमारै धन दावा बनवारी ||

या घन की देषऊ अधिकाई | तसकर रहे न लागै काई ||

### ५.२.५ गुरु कृपा का महत्व

निर्गुण सम्प्रदाय की तरह वारकरी सम्प्रदाय में भी गुरु का स्थान सर्वोपरी है | नवीन साधको के लिए तो गुरु ईश्वर से भी बड़ा होता है, क्योंकि गुरु कृपा द्वारा ही शिष्य भागवत कृपा की ओर उन्मुख होना सीख पाता है | जिस प्रकार संपूर्ण सन्त साहित्य में गुरु को सर्वश्रेष्ठ माना गया है, उसी प्रकार नामदेव ने जीवन एवं संसार में गुरु का स्थान सर्वोपरी माना है | सत्य का अन्वेषण और ज्ञान की प्राप्ति,और बिना गुरु कृपा के भक्ति समन्वय नहीं हो सकता है | नामदेव के लिए गुरु का शुद्ध वैकुण्ठ सिढी के समान है – गुरु को शब्द वैकुंठ निसरनी| नामदेव का विश्वास है की बिना गुरु प्रसाद के कुछ प्राप्त नहीं होता| संत नामदेव मानते है कि बिना गुरुकृपा के कुछ प्राप्त नहीं होता. सतगुरु की कृपा से ही नामदेव ने साधू का जीवन ग्रहण किया है |संत नामदेव को पुरा विश्वास है कि अब उन्हें निर्वाण मार्ग अवश्य प्राप्त हो जाएगा | वे गुरु को छोडकर अन्यत्र कहीं नहीं जायेंगे |

नामदेव कहते है कि मै तो केवल गुरु की ही शरण में जाऊंगा जिससे मेरा सभी प्रकार का हित संबंध है –

जऊ गुरुदेऊ त संसा टूटै |

जऊ गुरुदेऊ त भऊ जल तरै |

जऊ गुरुदेऊ न जनमि न मरै |

बिनु गुरुदेऊ अवर नहीं जाई |

नामदेऊ गुरु की सरणाई ||

ईश्वरोन्मुखता के कारण नामदेव का जीवन सफल हो गया | दु:ख के स्थान पर उन्हें सुख की अनुभूति होने लगी | गुरु ने नामदेव को निर्वाण पद का मार्ग बताया | नामदेव अपने गुरु विसोबा खेचर का बड़ी श्रद्धा से स्मरण करते है | वे कहते है कि उनके कृपा प्रसाद से ही मैने तुलसी सी माता पायी | उन्होने सतगुरु बनकर मुझे परम तत्व का साक्षात्कार कराया |

खचर भूचर तुलसी माला गूर परसादी पाइआ |

नामा प्रण वै परम तत है सति गुर होई लखाइया ||

अपने सत कर्म से नर किस प्रकार नारायण बन जाता है यह बात मुझे सतगुरु ने बताई – '

'नर ते सूर होई जात निमख मै सतगुरु बुद्धी सिखला हूँ||'

### ५.२.६ सत्संगति का महत्व

वारकरी सम्प्रदाय जाति - व्यवस्था का उन्मूलन करता है | अलगाव की प्रथाओ का खण्डन करता है | बाह्य आडम्बरो के निराकरण की अपील करता है और अन्त में भक्ति पूर्ण कथनी - करनी और रहनी की व्यवस्था करता है | इससे उसने एक नया समाज बनाया जो सत्संग के नाम से प्रसिद्ध है | यह सम्प्रदाय एक समतामूलक भक्तिमूलक तथा निजी आर्थिक व्यवस्था वाला सम्प्रदाय एक समतामूलक, भक्तिमूलक तथा निजी आर्थिक व्यवस्था वाला संगठन है | यह विरक्त साधुओ की जमात नहीं गृहस्थ भक्तों का संगठन है | वारकरी सम्प्रदाय के सभी जीवन पर्यन्त अपना पेशेवर कार्य करते है |

सत्संगति को सभी सन्तो ने भक्ति का प्रमुख साधन माना है | नामदेव हमेशा सन्तो के सहवास के लिए आतुर रहते है | वे अपनी आंतरिक अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहते है –

आज कोई मिलसी मुनै राम सनेही |

तब सुष पावै हमारी देही ||टेक||

भाव भगति मन में उपजावै | प्रेम प्रिती हरि अंतरी आवै ||१||

आपा पार दुविधा सबना सै | सहजै आतम ग्यान प्रकासै ||२||

जन नामा मन धारा उदास | तब सुष पावै मिलै हरिदास ||३||

अर्थात आज मुझे कोई हरि का दास मिल जाए तो मुझे परम सुख होगा, क्योंकि वह मेरे मन में भाव भक्ति को जागृत करेगा | मेरे मन की दुविधा को दूर करेगा तभी मुझमें आत्मज्ञान का प्रकाश फैलेगा | नामदेव कहते है कि जब मेरा उदास रहता है तब सन्त संगति से मुझे अपार सुख मिलता है |

जो व्यक्ति जितना हरि के भक्तो से दूर रहेगा वह हरि अर्थात परमात्मा से भी उतना ही दूर रहेगा | नामदेव कहते है कि हरि के अभाव में उस व्यक्ति को मुक्ति कैसे मिलेगी ?

"जोता अंतर भगत सू तेता हरि से होई |

नामा कहे ता दास की मुक्ति कहाँ तै होई ||

नामदेव सत्संगति के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहते है कि मैने छीपे के घर में जन्म लिया | मुझे विसोबा खेचर जैसे गुरु का उपदेश मिला तथा साधू सन्तो के प्रसार से मुझे भगवान के दर्शन सुलभ हो गये –

छीपे के घरी जनमु दैला गूर उपदेशु भैला ||

सन्त के परसादी नामा हरि भेटुला ||

### ५.२. ७ वात्सल्य भाव की प्रधानता

महाराष्ट्र में अन्य सम्प्रदायों की अपेक्षा वारकरी सम्प्रदाय का स्थान असाधारण है | वारकरियों की विठ्ठल भक्ति पावन गंगा है, जिसमे सभी जाति, धर्म, सम्प्रदाय के लोग डुबकी लगाकर मुक्ति के अधिकारी बन जाते है | वारकरियो की धारणा है – विठ्ठल माऊली प्रेम पान्हा पान्हावली अर्थात विठ्ठल रुपी माता अपने भक्त रुपी बालक को स्तनपान कराती है | सन्त नामदेव ने भी अपने मराठी अभंगो में इस वात्सल्य भाव का अविष्कार किया है | वे कहते है – विठ्ठल माऊली की मुझ पर कृपा दृष्टि है | स्मरण करते ही वह मुझे स्तन-पान कराती है | मेरी भूख-प्यास बिना बताये ही वह जान जाते है | घडी भर के लिए भी वह मुझे छोड़ने के लिए तैयार नहीं है –

विठ्ठल माऊली कृपेचि सावली | आठविता घाली प्रेम पान्हा |

न सांगता जाणे तान्हा भूख | जवली व्यापक न विसवे ||

नामदेव की हिन्दी रचनाओ में भी भक्त की भगवान के प्रति मिलन – उत्कृष्ठा की मधुर अभिव्यक्ति हुई है | इसे वे तालाबेली शब्द से परिचित कराते है जिसका अर्थ है – व्याकुलता जिसमे तीव्रता है आतुरता है नामदेव कहते है – हे भगवान ! तुमसे मिलने के लिए मै इतना आतुर हूँ, व्याकुल हूँ, जैसे एक बछडा अपनी गो माता से मिलने के लिए व्याकुल होता है | जैसे मछली पानी के बिना तड़पती है, ठीक वैसे ही राम नाम के बिना बेचारा नामदेव व्याकुल है –

'पाणिया बिन मीन तलफ़ै | ऐसे राम नाम बिन बापुरो नामा |

तन लागिले ताला बेली | बछा बिन गाई अकेली ||

## ५.३ सारांश

सन्त नामदेव का भक्तिभाव अजीब तरह का है | भगवान विठ्ठल की भक्ति में लीन यह सन्त अपने नित्य व्यवहार की वस्तूओ के रूपक बांधता है | दर्जी के घर कैची और कपडा तो नित्य की वस्तू है | इन्ही का रूपक बांधकर नामदेव ने मन को गज बनाया | जिव्हा की कैची बनाई और यमराज के भवपाश से मुक्त होने की क्रिया शुरू की | कर्मकाण्ड , बाह्याडम्बर, जप, तप के झमेले में न पडते हुए अपना व्यवसाय करते हुए, ईश्वर के नाम का उच्चारण करते-करते सहज से संसार सागर पार करना, नामदेव का परम सिद्धांत है |

नामदेव सन्त थे, वे सभी को समान रूप से उपदेश करते थे | चाहे हिंदू हो चाहे मुसलमान, चाहे वस्त्र रंगानेवाला हो, चाहे सिलाई करने वाला -

' रांगनि रंग सिवनी सिवऊ | राम नाम बिन घडी न जीवऊ ||

भगति करत हरि के गुण गावऊ | आठ प्रहर अपना खसम धिआवउ ||'

विठ्ठल का नामस्मरण करते समय नामदेव को लोहे की सुई सोने जैसी प्रतीत होती है और कपास का धागा चांदी जैसा |

सोने की सुई रूपे का धागा | नामे का चिन्त हरिसंग लागा |"

विठ्ठल के सगुण निर्गुण रूप में समन्वय करके, नामस्मरण की महत्ता को नामदेव ने प्रतिपादित किया एवं गुरु की कृपा तथा सत्संगति का होना भक्ति के लिए अनिवार्य माना |

## ५. ४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

1) सन्त नामदेव की भक्ति भावना को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए ?

2) सन्त नामदेव की भक्ति में सगुण – निर्गुण दोनो का समन्वय हुआ है इस कथन पर प्रकाश डालिए |

## ५. ५ लघुत्तरीय प्रश्न

१) भागवत धर्म के उपस्थापक किसे कहा जाता है ?

२) भागवत धर्म की उत्पत्ति कथा कहाँ मिलती है ?

३) प्रबन्धम में किसके गीत संग्रहित है ?

४) भागवत में व्यास किसके मुख से भक्ति की सारगर्भित व्याख्या कराई है ?

५) नारद के अनुसार भक्ति क्या है ?

६) निर्गुण-सगुण की एकता को नामदेव किस दृष्टांत द्वारा प्रमाणित करते है ?

७) नामदेव निर्गुण – सगुण के अद्वैत को किस दृष्टांत द्वारा पुष्ट करते है?

८) नामदेव के गुरु का नाम क्या था ?

९) ज्ञानोत्तर भक्ति किसे कहते है ?

१०) वारकरी सम्प्रदाय के तीन मान्य सिद्धांत क्या है ?

११) नामदेव किसकी खेती में लगे थे ?

१२) नामदेव के लिए गुरु का शब्द किसके समान है ?

१३) तालाबेली का क्या अर्थ है ?

१४) नामदेव के वठ्ठल किसके प्रतीक है ?

## ५. ६ सन्दर्भ ग्रन्थ


1) सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली, सं. भगीरथ मिश्र, राजनारायण मौर्य, पूना, विश्वविद्यालय पूना, प्र. सं. १९६४

2) उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, परशुराम चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयाग, राज ०१, पुनर्मुद्रण २०२०.

3) सन्त काव्य, पं. परशुराम चतुर्वेदी, किताब महल, इलाहाबाद, सं. २०१७,

4) सन्त नामदेव करू. गो. वावरणे गुरुजी, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नईदिल्ली.

5) हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त प्रभाकर माचवे, चौखाबा विद्याभवन वाराणसी डॉ. प्रभाकर माचवे, चौखबा विद्याभवन, वाराणसी, प्र.सं. १९६२

6) हिन्दी निर्गुण काव्य का प्रारम्भ और नामदेव की हिन्दी कविता, डॉ. शं. के. आडकर रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. सं. १९७२

7) मराठी सन्तो की हिन्दी वाणी, सं. आनन्द प्रकाश दीक्षित, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, ०३, प्र. सं. १९०३

8) महाराष्ट्र के सन्तो का हिन्दी काव्य, प्रभाकर सदाशिव पंडित, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, प्र.सं. १९९१

9) हिन्दी को मराठी संतो की देन, विनयमोहन शर्मा, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, ०३, मार्च १९५७

10) पांच सन्त कवि डॉ. श. गो. तुलपुले, व्हीनस प्रकाशन पुणे, सन १९६२.


❖❖❖❖

# ६

## संत तुकाराम व्यक्तित्व और कृतित्व

**इकाई की रूपरेखा**


६.० इकाई का उद्देश्य

६.१ प्रस्तावना

६.२ संत तुकाराम का जन्म और बालकाल

६.३ विवाह

६.४ कष्टकाल

६.५ भक्ति की और उन्मुख

६.६ गाथालेखन की प्रेरणा

६.७ गुरु का साक्षात्कार

६.८ भक्ति की प्रचीति और शिवाजी महाराज भेंट

६.९ वैकुंठ गमन

६.१० सारांश

६.११ दीर्घोत्तरी प्रश्न

६.१२ लघुत्तरी प्रश्न


## ६.० इकाई का उद्देश्य

महाराष्ट्र राज्य में संत ज्ञानेश्वर से लेकर संत तुकाराम तक एक बड़ी श्रंखला में संत परंपरा चली और आगे चलकर इस परंपरा का निर्वहन आज भी वारकरी संप्रदाय बड़ी ही भक्ति भावना के साथ कर रहा है |

## ६.१ प्रस्तावना

भारत देश में भक्ति परंपरा सदियों से चली आ रही है | भक्ति भाव हर एक ह्रदय को सुख और शांति प्रदान करता है इसीलिए भक्ति काल संबंधी काव्यधारा साहित्य का स्वर्ण युग कहलाती है संपूर्ण भारत देश कई राज्यों में बँटा हुआ है वहाँ की भाषा - बोली, रहन - सहन, रीति - रिवाज, परंपराएँ सब एक दूसरे से अलग हैं वहीं ईश्वर एक होते हुए भी हर राज्य में उसके एक अलग रूप की उपासना की जाती है भक्ति की जाती है और वह भक्ति भावना भी अपना एक अलग रूप लिए होती है उन्हीं में प्रमुख है | महाराष्ट्र राज्य की संत परंपरा और वारकरी संप्रदाय |

**संत तुकाराम व्यक्तित्व और कृतित्व**

मराठी संत काव्य का प्रारंभ 13 वीं सदी से 18 वीं सदी तक माना जाता है | इस प्रकार 600 वर्षों के दीर्घ काल तक महाराष्ट्र संत परंपरा सर्वोत्तम रूप में रही । इस प्रदीर्घ काल में संतकाव्य के अध्ययन द्वारा तत्कालीन समय की सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आदि परिस्थिति को हम आसानी से जान सकते हैं, समझ सकते हैं और इन सभी परिस्थितियों को समझने के पश्चात हमें ज्ञात होता है कि जो प्रमुख सत्ता महाराष्ट्र में थी वह थी संतो की सत्ता उनकी वाणी की सत्ता क्योंकि संतों की भाषा और उनका चरित्र और उनके काव्य में भरी मिठास और सद्गुणी वाणी लोक मन पर अपना राज्य करती है | महाराष्ट्र में संत विचार धारा का प्रारंभ संत ज्ञानेश्वर द्वारा माना जाता है सर्वप्रथम संत ज्ञानेश्वर ने ही आध्यात्मिक विचारधारा की नीव महाराष्ट्र में रखी और इसी विचारधारा को आगे भाई भट्ट, संत नामदेव, ज्ञानदेव और 17 वीं शताब्दी में संत तुकाराम के द्वारा वारकरी संप्रदाय को एक नवविचार मिला विविध संप्रदायों की स्थापना हुई और भक्ति का योग्य मार्ग दिखाने के लिए कई महानुभावपंथ और वारकरी संप्रदाय ने यथेष्ट कार्य किए।

## ६.२ संत तुकाराम का जन्म और बालकाल:-

संत तुकाराम महाराज का जन्म देहु ग्राम माना जाता है | देहू आज एक बड़े तीर्थ क्षेत्र के रूप में ख्याति प्राप्त है | देहू ग्राम महाराष्ट्र में पुणे महानगर से 30 किलोमीटर दूरी पर बसा है इसी गांव से थोड़ी दूरी पर आलंदी तीर्थ क्षेत्र है जो संत ज्ञानेश्वर की जन्मभूमि और कर्म भूमि मानी जाती है।

देहु ग्राम के विषय में एक किवदंती है जो इस ग्राम को तीर्थ क्षेत्र बनाती है - तुकाराम महाराज विशंभर बाबा के आठवे वंशज है कहा जाता है कि इनके घर में भक्ति परंपरा का निवास सदियों से चल रहा था विशंभर बाबा पंढरपुर में बसे पांडुरंग विट्ठल भगवान के एक निष्ठ भक्त थे नित, नियम से हर साल पंढरपुर की वारी करते थे लेकिन बुढ़ापा और हाथ पैरों का ना चलना उनके पंढरपुर जाने में रुकावट बनने लगा लेकिन उनको एक पल भी चैन नहीं मिलता पल पल यही लगता कि कब मैं पंढरपुर पहुंच जाऊं उनकी इस मनोव्यथा को जानकर समझकर स्वयं भगवान विट्ठल उनके सपने में आए और उनसे कहा आप मेरे पास ना आइए मैं ही आपके पास आजाऊंगा | देहू के पास एक आंबलवन है वहाँ जाकर मुझे ले आओ, विशंभर बाबा ने जब दूसरे दिन अपना यह सपना सभी गांव वालों को सुनाया तो सभी गांव वाले उनकी भक्ति और एक निष्ठा को जानते थे इसीलिए उनके साथ आंबलवन चल दिए वहां जाकर उन्हें भास हुआ कि अभीर ओर चंदन की खुशबू से वन महक रहा है वही एक जगह उन्हे तुलसीपत्र और बुका दिखा तुलसीपत्र और बुका देखकर विशंभर बाबा को भास हो गया कि मेरे पांडुरंग मुझे यही मिलेंगे जैसे जैसे वह उस जगह को खोदते तुलसीपत्र और बुका निकलता ही जाता जब उन्होंने अपना खोदना जारी रखा तब उन्हें विट्ठल और रुक्मणी की सुंदर मूर्ति मिली उन मूर्तियों को देखकर उनका आनंद द्विगणित हो गया | उन्होंने मन ही मन विट्ठल का ध्यान कर आनंद से भजन गाते हुए उस मूर्ति को अपने घर ले आए और षोडोपचार से मूर्ति की स्थापना की उसी जगह देहु ग्राम में विट्ठल रुक्मणी का मंदिर आज भी है इसी जगह पर बैठकर तुकाराम महाराज विट्ठल के भजन गाया करते थे

आगे चलकर तुकाराम महाराज के पुत्र नारायण बाबा ने सन 1704 में इसी जगह मंदिर की स्थापना की।

संत तुकाराम महाराज के जन्म के विषय में कई विद्वानों में मतभेद हैं तुकाराम महाराज के पहले चरित्र लेखन करने वाले विद्वान महिपति बुवा ने तुकाराम महाराज का जन्म संवत 1530 माना है | विद्वान वी. का. राजवाड़े के अनुसार तुकाराम महाराज का जन्म संवत 1490 है, विनायक कोंडे ओक के मतानुसार तुकाराम महाराज का जन्म 1510 माना गया है परंतु इन सभी विद्वानों से उच्च तथ्य तुकाराम महाराज के जन्म के विषय में स्वयं तुकाराम गाथा में हमें मिलता है तुकाराम गाथा में संत तुकाराम का जन्म संवत 1608 माना गया है | संत तुकाराम का घर गांव में प्रतिष्ठित और खानदानी माना जाता था | उनके यहां साहूकारकी चलती थी उनके यहां बहुत बड़े खेत भी थे घर की परिस्थिति आर्थिक दृष्टि से बहुत अच्छी थी और विट्ठल भक्ति का भाव उन्हें अपने परिवार में पूर्वजों से मिला | संत तुकाराम के पिता का नाम बोल्होबा था | बोल्होबा सत्यवादी, परोपकारी व्यक्तित्व के धनी थे | नित्य पंढरपुर की वारी जैसे सात्विक कर्म करने वाले थे उन्हें 3 पुत्र हुए सावजी, तुकाराम और कान्होबा। उनके घर में नित्य प्रति कीर्तन, प्रवचन, गीता भागवत आदि के पाठ होते रहते और इन्हीं संस्कारों में संत तुकाराम का पालन पोषण हो रहा था | घर में साहूकारी का कार्य होने के कारण तुकाराम बचपन में ही लिखना और पढ़ना सीख गए थे। घर की आर्थिक परिस्थिति सुदृढ़ होने के कारण उनका बचपन खेलते - कुदते, सुख और आराम में व्यतीत हुआ इस विषय में स्वयं तुकाराम महाराज ने तुकाराम गाथा में लिखा भी है कि किस प्रकार उन्होंने अपनी 12 वर्ष की आयु मित्रों के साथ खेलने में बिताई |

"बाळपणे ऐसीं वरुषें गेलीं बारा।खेलतां या पोरा नानामतें ॥१॥

## ६.३ विवाह:-

उनके सर पर कोई जवाबदारी नहीं थी माता पिता का अपार प्रेम उन्हें मिल मिल रहा था।उम्र के 13 वर्ष में संत तुकाराम का विवाह रखुमाई से हुआ तुकाराम महाराज ने वैवाहिक जीवन और गृहस्थी की जवाबदारी बहुत अच्छे से संभाली उन्हें संतुजी नामक एक पुत्र भी था | उनकी गृहस्थी सुख और आराम के साथ चल रही थी तभी तुकाराम की पत्नी रखमाबाई को दमे का गंभीर बीमारी हुई जिसका कोई इलाज नहीं था इस परिस्थिति को देख उनके माता-पिता बोल्होबा और कंकाई ने उनका दूसरा विवाह जीजाबाई से कर दिया उस समय तुकाराम की उम्र 17 वर्ष की थी पहली पत्नी रखुमाई ने यह सब स्वखुशी से स्वीकार किया था इसीलिए उनकी घर गृहस्थी दूसरे विवाह के पश्चात भी बड़े आनंद से व्यतीत हो रही थी माता-पिता का प्रेम और आशीर्वाद से उनका घर खुशहाली से भरा था व्यापार और व्यवसाय भी उन्नति पर था |

## ६.४ कष्टकाल:-

संत तुकाराम के जीवन में यह सब सुख ज्यादा दिन टिकने वाला नहीं था | उनके पिता का देहांत हो गया और थोड़े ही समय में उनकी माता भी चल बसी | जिस प्रकार संत तुकाराम ने सुख वैभव का तुकाराम गाथा में वर्णन किया है उसी प्रकार इन दुखों का भी वर्णन तुकाराम गाथा में मिलता है अपने माता-पिता के जाने से दुखी होकर वे लिखते हैं

"संवसारे जालो अति दुःखे - दुःखी।

माय-बाप सेखी मिलियाँ ||

इस प्रकार इस पद से स्पष्ट है कि उनके माता-पिता का देहांत एक के उपरांत एक शीघ्र ही हो गया था | माता - पिता के देहांत के पश्चात व्यापार की जवाबदारी बड़े भाई सावजी को लेना चाहिए था लेकिन सावजी विरक्त स्वभाव के थे और उसी समय काल में तत्पश्चात सावजी की पत्नी का भी निधन हो गया सावजी निराश होकर तीर्थ यात्रा को चले गए तो वापस लौटे ही नहीं घर की संपूर्ण जवाबदारी संत तुकाराम पर आ गई और उनका हंसता खेलता घर परिवार, समृद्ध आर्थिक परिस्थिति दो-तीन साल में निर्धन और निर्बल हो गई | इतनी बड़ी कौटुम्बिक आपदा से संत तुकाराम हतबल हो गए यह सब इतना अचानक हुआ कि ईश्वर ने इस परिस्थिति से संवरने का मौका ही नहीं दिया इतने बड़े दुख का वर्णन उनके इस अभंग से हमें ज्ञात होता है।

सावजी"बाईल मेली मुक्त झाली , देवे माया सोडविली ।।१।।
विठो तुझे माझे राज्य ,नाही दुसऱ्याचे काज ।।धृ ।।
पोर मेले बरे झाले ।देवे माया विरहित केले ।।२।।
माता मेली मज देखता । तुका म्हणे हरली चिंता ।।३।। ७७८

संत तुकाराम पर आयी मुसीबतें यही थमने वाली नहीं थी अभी तो प्रकृति ने कहर ढाना बाकी था | सन 1629 - 30 में पूरे महाराष्ट्र राज्य में भयंकर सूखा की परिस्थिति निर्माण हो गई थी | किसी के पास अन्न - पानी नहीं था, कई पशु-पक्षी भी बिन पानी के तड़प तड़प कर मर गए, नदी,नाले, तालाब, झरना आदि का पानी भी सूख गया दो साल बारिश ना होने के कारण खेतों में कुछ उपज नहीं हुई महंगाई बढ़ गई और संत तुकाराम का व्यवसाय भी बंद हो गया | वह बैल के ऊपर नमक ढोने का और बेचने का कार्य करने लगे । और इससे जो पैसे उन्हें मिले वह भी उन्होंने गरीबों को दान कर दिए इसी बीच आर्थिक दुर्दशा के कारण उनकी पहली पत्नी का देहांत हो गया और तत्पश्चात उनका बेटा भी स्वर्ग सुधार गया ऐसी परिस्थिति में संत तुकाराम के दुखों का कोई पारावार ही नहीं रहा बस गृहस्थ जीवन के दो चार साल ही वे सुख से बीता पाए अपनी आप बीती को उन्होंने इस पद के द्वारा व्यक्त किया है।

दुष्काळे आटिले द्रव्ये नेला मान । स्त्री एक एक अन्न अन्न करता मेली ।।३।।
लज्जा वाटे जीव त्रासलो या दुःखे । वेवसाय देखे तुटीयेतां ।।४।।१३३३

संत तुकाराम के इस पद से हम अंदाज लगा सकते हैं कि तत्कालीन समय में अनगिनत लोग अन्न जल के बिना चल बसे जब किस्मत खराब होती है तो मुसीबतें चारों ओर से आती हैं ऐसा ही संत तुकारामजी के साथ हुआ जब वह जानवरों पर ढोकर सामान बेचते थे लेकिन सुखा की भयावह परिस्थिति के कारण जानवर भी मर गए और अब संत तुकाराम पीठ पर ढोकर सामान बेचने लगे उनके सरल स्वभाव के कारण उनके साथ एक दो बार ठगों ने उनका सामान और पैसे चुरा लिए इस परिस्थिति से उनके जीवन में अमूल्यपरिवर्तन आया सांसारिक सुख उन्हें क्षणिक लगने लगा और यह सुख क्षणभंगुर है ऐसा उन्हें ज्ञात होने लगा उनका मन घर गृहस्थी से विरल होने लगा और धीरे-धीरे भागवत भक्ति की ओर

जुड़ने लगा इस संबंध में उनके एक पद में उन्होंने स्वयं को दयनीय बताया है | वह सांसारिक जीवन को बोझ समझने लगे और इस का बोझ ढोते-ढोते थक गए |

"संवसारतापे तापलो मी देवा। करितां सेवा या कुटुंबा ची ॥१॥
वाडियेली चोरी अंत ब्राह्त्याकारी। कणव ना करी कोणी माझी ॥३॥
बहु पांगविलों बहु नागविलों।बहु दिवस झालो कासावीस ॥४॥" ९१

## ६.५ भक्ति की ओर उन्मुख :-

इस प्रकार इन अपार कष्टों को भोगने के बाद संत तुकाराम गृहस्थ जीवन से अस्वस्थ हो विट्ठल भक्ति की ओर उन्मुख हुए | अत्यंत त्रासदी और गृहस्थ जीवन में दुख - पीड़ा के अतिरिक्त और कुछ नहीं था | आर्थिक परिस्थिति इतनी खराब हो गई थी कि सर पर कर्ज बढ़ गया था उनकी पत्नी जीजाबाई चाहती थी कि संत तुकाराम घर संसार की बागडोर अच्छे से संभाले लेकिन तुकाराम काम न तो विट्ठल भक्ति के मार्ग पर चल पड़ा था और यहां से पीछे मुड़ना अब ना मुमकिन था | तुकाराम अब अपने आराध्य विट्ठल को पाना चाहते थे यही उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य था घर गृहस्थी का त्याग उन्होंने कर दिया और संसार से दुखी होकर लोक निंदा की त्रासदी से बेचैन होकर देहूग्राम के पास धामगिरी नामक पर्वत पर जाकर हरि भक्ति का चिंतन मनन अर्थात तपस्या करने लगे। परमार्थ की ओर संत तुकाराम इतने आकृष्ट हो चुके थे कि उनका आठों प्रहर भगवत भक्ति में ही लीन होता था उन्होंने ज्ञानेश्वरी, एकनाथी भागवत का अच्छी तरह से अध्ययन किया सुबह जल्दी उठकर विट्ठल मंदिर में पूजा अर्चना करते, दिनभर एकांत वास में नामस्मरण करते, ग्रंथों का वाचन करते और रात्री के समय भगवान की भक्ति और कीर्तन सुनने में अपना समय बिताते उनके परमार्थ में इतना आध्यात्म आ चुका था कि उन्होंने परमार्थ लीन होकर यह पद लिखा।

"बरे झाले देवा निघाले दिवाळे। बरी या दुष्काळे पीडा केली ॥१॥
अनुतापें तुझे राहिले चिंतन।जाला हा वमन संवसार ॥ध्रु. ॥" १३३५

भक्ति में लीन तुकाराम की वाणी अब परम - परमार्थ साधकर ऐसा मानने लगी थी कि जो हुआ वह अच्छा हुआ | अच्छा हुआ कि घर गृहस्थी व्यवसाय में मेरा दिवाला निकल गया और यह जो सूखे की परिस्थिति आई वह भी अच्छा हुआ क्योंकि इस परिस्थिति के कारण ही तो मैं जीवन का सार समझ पाया और घर गृहस्थी को छोड़कर भगवान की भक्ति में लग गया | संत तुकाराम का कहने का पर्याय है यदि मेरी गृहस्थी सुख समाधान से चल रही होती और आर्थिक परिस्थिति भी सुदृढ़ होती तो मैं गृहस्थ जीवन छोड़कर भगवत भक्ति की ओर कभी आही नहीं पाता क्योंकि इन विकट अनुभवों से तो उन्होंने यह ज्ञान पाया था कि जीवन नश्वर है, संसार नश्वर है और इस संसार में दुख के सिवा और कुछ नहीं मिलेगा सुख को पाना है तो वैराग्य की और आना पड़ेगा इस प्रकार उनके पूर्वज विशंभर नाथजी ने जो मंदिर बनाया था वह उसी में बैठकर भगवान विट्ठल का नामस्मरण और जप करने लगे और उनका जीवन विट्ठल मय हो गया सोते उठते जागते बैठते सिर्फ विट्ठल नाम का ध्यास ही उनके तन और मन में रहता उन्होंने एक पद में कहा भी है |

'बोलावा विठ्ठल, पहावा विठ्ठल । करावा विठ्ठल जीव भाव ।।
येणे सोसोमन जाले हावभरी।परती माघारी येत नाही ।।"

इस प्रकार संत तुकाराम का तन–मन-धन विठ्ठल भक्ति में लीन हो गया लेकिन अभी तक कोई गुरु उन्हें नहीं मिले थे| जीवन के हर पथ पर गुरु का मार्गदर्शन प्रमुख माना जाता है| संत तुकाराम ग्रंथों के अध्ययन और मनन में ही इस संदर्भ में सब प्रकार जानकारी से स्वयं को आप्लावित कर रहे थे भगवान की नित्य पूजा करना एकादशी का उपवास करना, कीर्तन करना, नामस्मरण करना, ज्ञानेश्वरी, एकनाथी भागवत और रामायण जैसे ग्रंथों का अध्ययन करना उनका दिन क्रम बन चुका था लेकिन जब सद्गुरु का विचार उनके मन में आया तो स्वयं विठ्ठल भगवान को ही उन्होंने अपना गुरु मान लिया और विठ्ठल भगवान को ही माता - पिता, गुरु - बंधु सब स्वीकार कर लिया और परमार्थ की ओर प्रगति का मार्ग अग्रसर हो उठा क्योंकि सद्गुरु के रूप में स्वयं विठ्ठल की कृपा दृष्टि उनपर थी |

## ६.६ गाथा लेखन की प्रेरणा

तुकाराम गाथा लेखन के संदर्भ में कहा जाता है कि सतसंग गुरु अर्थात विठ्ठल और संतनामदेव ने उन्हें काव्य की प्रेरणादी | एक किवदंती के अनुसार एक रात संत नामदेव और भगवान विठ्ठल उनके सपने में आए और उनसे कहा अब कीर्तन भजन बहुत हो चुका अपनी वाणी को एक स्थान दो उसे ऐसे व्यर्थ ना जाने दो इस प्रकार स्वयं भगवन और संत नामदेव के कहने पर उन्होंने काव्य रचना प्रारंभ की इस विषय में एक पद में उन्होंने कहा है।

"आपल्या बळे नाही मी बोलत । सखा भगवन्त वाचा त्याची ।।१।।"२९५०
"नामदेव केले स्वप्ना माजी जाणें ।सर्वे पांडुरंगे येऊनियां ।।
सांगितले काम करावे कवित्व ।वाऊगे निमित्य बोलो नको ।।"१३२०

इस प्रकार संत तुकाराम का पत्र लेखन का कार्य प्रारंभ हो गया और उनकी आध्यात्मि कता की ओढ़ बढ़ने लगी, उनका मन समाधानी और शांति की ओर लगने लगा, संसार से वे दूर और अध्यात्म के पास आने लगे अब उनकी चित्त वृत्ति में और ध्यान में उनके सामने सिर्फ विठ्ठल ही थे।

## ६.७ गुरु का साक्षात्कार

संत तुकाराम महाराज भगवान विठ्ठल को ही अपना गुरु मानते थे लेकिन जब गुरुमंत्र की बात आती है तो जब गुरु शिष्य के कान में गुरु मंत्र कहता है वही सार्थक गुरु शिष्य परंपरा मानी जाती है | कहा जाता है कि भगवान विठ्ठल का साक्षात्कार संत तुकाराम को हुआ स्वयं संत तुकाराम ने इस घटना का वर्णन तुकाराम गाथा में किया है उनके एक पद में लिखा है कि माघ शुद्ध दशमी गुरुवार की रात्रि एक सपना आया और उस सपने में तुकाराम महाराज गंगास्नान के लिए जाते हैं रास्ते में उन्हें सत्पुरुष मिलते हैं उन्होंने अपना नाम बाबाजी बताया और वह सत्पुरुष महाराज के सर पर हाथ रखकर रामकृष्ण हरिनामक मंत्र का ज्ञान उन्हें देते हैं और राघव चैतन्य केशव चैतन्य गुरु परंपरा का पाठ पढ़ाकर उनसे भोजन के लिए पाव भर घी मांगते हैं महाराज घी लाने के लिए जाते हैं और आकर देखते हैं

तो वहां कोई नहीं है महाराज दुखी हो जाते हैं कि वह गुरु की कोई सेवा नहीं कर पाए इस घटना का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया है |

"सत्गुरुराये कृपा मज केली | परि नाही घड़ली सेवा काही || १||
सापंडविले वाट जाता गंगा स्नाना | मस्तकी तो जाना ठेविला कर || ध्रु ||
भोजन मागती तूप पावशेर | पडिला विसर स्वप्नामाजी ||३ ||
काय कळे उपजला अंतराय । म्हणोनियां काय त्वरा झाली ।।४।।
राघवचैतन्य, केशवचैतन्य ।सांगितली खूण माळीकेची ।।५।।
बाबाजी आपुले सांगितले नाम ।मन्त्र दिला राम कृष्ण हरि ।।६।।
माहो शुद्ध दशमी पाहुनि गुरुवार ।केला अंगीकार तुका म्हणे।।७।।" ८

## ६.८ भक्ति की प्रचीति और शिवाजी महाराज भेंट

संत तुकाराम को मिलने वाली सांसारिक पीड़ाओं का अभी विराम नहीं हुआ था उनकी भगवत भक्ति की पराकाष्ठा जानकर भी अंबाजी और सालू मालू जैसे ढोंगी उनका द्वेष करते रहे नाना प्रकार का छल उनके साथ हुआ परंतु तुकाराम महाराज की भगवत भक्ति का प्रताप उनके क्रोध को तिलांजलि दे चुका था इसीलिए किसी भी गैरवर्तन की परवाह किए बिना वे अपनी विट्ठल भक्ति में लीन रहे और हर कष्ट परेशानी से उन्हें स्वयं भगवान विट्ठल उनको तारते रहे ऐसे अनेक प्रसंग तुकाराम गाथा में है जब भगवान ने स्वयं आकर उनके और उनके परिवार की रक्षा की है | रामेश्वर भट्ट ने संत तुकाराम के पदों पर आपत्ति जताई और उन्हें बुलाया और कहा कि तुम जाति के शूद्र हो इस प्रकार की काव्य रचना या भगवान भक्ति का पाठ - पठन तुम्हारा कार्य नहीं है अपनी सभी काव्य कृतियां जाकर नदी में फेंक आओ | तुकाराम महाराज ने उनकी आज्ञा मानकर अपना संपूर्ण रचना काव्य नदी में विसर्जित कर दिया और उदास होकर आंखों में आंसू लिए दिन रात विट्ठल विट्ठल नाम का जप करने लगे कहा जाता है कि भगवान विट्ठल ने उन्हें दृष्टांत दिया और कहा कि जाओ नदी में से अपनी सभी का कृतियां ले आओ वह सुखी की सूखी है बिल्कुल गीली नहीं हुई है | कहा जाता है कि रामेश्वर भट्ट का शरीर ज्वाला के समान जलने लगा यह दाह किसी भी उपचार से कम ना हुई जब ज्ञानेश्वर महाराज ने उन्हें दृष्टांत देकर कहा कि तुम तुकाराम के चरणों में जाओ तभी तुम्हारी यह दाह कम होगी तब रामेश्वर भट्ट तुकाराम महाराज के चरणों में जा गिरे और उनकी सभी व्याधि समाप्त हो गई | वे बाद में आजीवन तुकाराम महाराज के शिष्य बनकर रहे इस प्रकार की अनेक कथाओं से और भगवत भक्ति से भरी पद लीलाओं से संत तुकाराम महाराज की महिमा शीघ्र ही अलौकिक हो गई , उनकी कीर्ति इतनी फैल गई की स्वयं शिवाजी महाराज भी उनके कीर्तन भजन सुनने आया करते थे उनके एक अभंग में इस बात की पुष्टि इस प्रकार हुई है |

"पाईक तो प्रजा राखोनियां कुळ ।पारखिया मूळ छेदी दुष्टा ।।१।।
तो एक पाईक पाईकां नाईक ।भाव सकळीक स्वामिकाजीं ।।ध्रु ।।"

## ६.९ वैकुंठगमन

संत तुकाराम महाराज ने अपने जीवन काल में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक सभी धरातल पर अहम भूमिका निभाई उनका साहित्य समाज के लिए एक आदर्श रूप में आज भी प्रासंगिक है | जीवन के हर पहलू को एक निर्वाण और भक्ति के दृष्टिकोण को स्थापित करते हुए उज्जवल जीवन की कामना से भरा हुआ तुकाराम गाथा ग्रंथ एक आदर्श रूप है भक्ति का और भक्ति की शक्ति का | गृहस्थ जीवन जीते हुए किस प्रकार धार्मिक भावना का बोध हर व्यक्ति दोनों में समतोल बनाकर सद्भावना से अपना जीवन जी सकता है यह तुकाराम का साहित्य हमें बताता है |

संत तुकाराम की अंतरात्मा को इस बात का ध्यान हो जाता है कि अब प्रभु से मिलन की घटिका बहुत पास है उन्हें प्रभु मिलन की आतुरता होने लगती है इससे संबंधित कई पद तुकाराम गाथा में दृष्टिगत होते है |

"आतां कशा साठी दुरी अंतर उरी राखिली ॥१॥
---
तुका म्हणे वेग व्हावा ।ऐसी जिवा उतकंठा ॥ ४॥" १७

इस प्रकार का पत्र संत तुकाराम भगवान को भेजते हैं और उनसे मिलने की उत्कंठा पत्र में व्यक्त करते हैं और भगवान के घर को वे मायका मानते हैं और मायके जाने के लिए अत्यंत आतुर हो इस प्रकार अपनी आतुरता व्यक्त करते हैं |

“आपला माहेरा जाईन मी आता ।निरोप या संतां हाती आला ॥१॥
---/---/---/---
तुका म्हणे आता येतील न्यावया ।अंगे आपुलिया माय बाप ॥५॥" १८

संत तुकाराम के संबंध में ऐसी मान्यता है कि स्वयं भगवान विट्ठल उन्हें लेने आए तब संत तुकाराम आनंदित होकर उन्हें अपने घर ले गए और खाना खिलाया | उनकी पत्नी जिजाऊ ने भगवान के लिए अनाज के दाने उबालकर खिलाए भगवान ने आनंद से वह दाने खाए इस प्रसंग का वर्णन संत तुकाराम ने बहुत ही सुंदर शब्दों में किया है |

"पाहुणे घराशी आज आले हृषीकेशी ॥१॥
काय करू उपचार ।कोप मोडकी जर्जर ॥२॥
दरीदरित पाण्या -।मांजी रांधियेल्या कण्या ॥३॥
घरी मोडकीया वाजा ।वरी वाकड्यांच्या शेजा ॥४॥
मुख शुद्धि तुळसी दळ ।तुका म्हणे मी दुरबळ ॥५॥"२०

और अंत में फाल्गुन तिथि द्वितीय को प्रातः काल के समय संत तुकाराम महाराज ने जीजाबाई से अंतिम भेंट की और उन्हें आशीर्वाद दिया के वे अपने पुत्र नारायण से सहस्त्र सुख प्राप्त करेंगी और अंत में समाधान व्यक्त करते हुए मंदिर की ओर निकल पड़े | मंदिर में बहुत बड़ा जम घट भजन-कीर्तन में लगा था | तुकाराम महाराज उन्हें उपदेश देते हुए कहते

हैं कि मैं अपने गांव जाता हूँ और आप लोगों को आखिरी राम-राम करता हूँ यहीं से मेरी जन्म लीला समाप्त होती है मुझसे कुछ त्रुटि हुई हो तो क्षमा करना यहां रहकर आप लोग विट्ठल की भक्ति करना, रामकृष्ण का जप करना और इस प्रकार के उपदेशगत वचन देकर वे वैकुंठ गमन करते हैं उनके आखिरी वचन इस प्रकार शब्दगत हुए हैं |

"आम्ही जातो तुम्ही कृपा असू द्यावी ।सकळां सांगावी विंनती माझी।।१।।

वाड वेळ झाला उभा पांडुरंग। वैकुंठा श्री रंग बोलवितो।।२।।

अंतकाळी विठो आम्हांसी पावला। कुडी सहित झाला गुप्त तुका। ।३।।"२४

## ६.१० सारांश

उक्त इकाई में संत तुकाराम के जन्म, जीवन के विषय में अध्ययन किया | संतो का चरित्र उज्ज्वल उनका जीवन प्रवास खडतर होता है | वे अग्नि के समान तप कर संसार को रौशनी देते है | उनका देह सुख भोग के लिए नहीं वरन मानव जीवन के ज्ञान परिमार्जन लिए है | ऐसे संतों के जीवन और कृतत्व का अध्ययन करना हमारे विचारशीलता और दृष्टिकोण को सही दिशा की ओर अग्रसर करना है | इस इकाई के अध्ययन से विद्यार्थी संत तुकाराम महाराज के जीवन और उन्हें मिले कष्टों का अपार सागर को जान सके है साथ ही कष्ट दायी जीवन को ईश्वर भक्ति में लीन कर जन्म की सार्थकता का ज्ञान दिया है |

## ६.११ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. संत तुकाराम महाराज के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालिए |
२. संत तुकाराम महाराज के जीवन वृतांत का वर्णन कीजिए |

## ६.१२ लघुत्तरी प्रश्न

१. संत तुकाराम महाराज का जन्म स्थान कौनसा है ?
उत्तर - देहु ग्राम
२. विद्वान वी. का. राजवाड़े के अनुसार तुकाराम महाराज का जन्म संवत  है
उत्तर - संवत १४९०
३. सावजी और कान्होबा  संत तुकाराम के साथ क्या रिश्ता था ?
उत्तर - भाई का
४. संत तुकाराम महाराज किस स्थान पर जाकर हरि भक्ति का चिंतन मनन अर्थात तपस्या करने लगे।
उत्तर - धाम गिरी नामक पर्वत
५. संत तुकाराम महाराज के गुरु ने उन्हें कौनसा मंत्र दिया ?
उत्तर - राम कृष्ण हरि मंत्र

❖❖❖❖

# ७

# सन्त तुकाराम की विट्ठल भक्ति

**इकाई की रुपरेखा**

७.० इकाई का उद्देश्य

७.१ प्रस्तावना

७.२ श्री विट्ठल भगवान

७.३ भक्त पुंडलिक और पंढरपुर

७.४ संत तुकाराम महाराज के काव्य में सगुण और निर्गुण भक्ति भाव

७. ५ भक्ति का निर्गुण मार्ग

७. ६ नवधा भक्ति

७. ७ सारांश

७. ८ दीर्घोत्तरी प्रश्न

७. ९ लघुत्तरी प्रश्न

## ७.० इकाई का उद्देश्य:-

संत तुकाराम की भक्ति भावना सर्वांगीण रूप से परिपूर्ण और भक्ति की पराकाष्ठा को व्यक्त करता है | ईश्वर की भेंट उनके साक्षात् स्वरूप के दर्शन उनके भक्ति मार्ग के अध्ययन की ओर हमें आकर्षित करते है | इस इकाई में हम तुकाराम महाराज की भक्ति के सभी माध्यम और सभी मार्गों का विस्तृत अध्ययन करेंगे

### ७.१ प्रस्तावना:-

महाराष्ट्र राज्य में वारकरी संप्रदाय और संत भक्ति भावना को कौन नहीं जानता | भगवान विट्ठल वारकरी और संतों के आराध्य देव जिन्हें भागवत धर्म में भक्तों ने शीर्ष स्थान पर रखा है और उनकी भक्ति तन - मन - धन से की है | हम संत तुकाराम महाराज की बात करें तो उनका जन्म एक सुख संपन्न भरे परिवार में हुआ लेकिन अपने आधे जीवन में सुख भोगने के बाद जब आगामी जीवन मुसीबत और संकटों से भर गया सभी धन - जायदाद तबाह हो गई, कर्ज सर पर चढ़ गया, जो मान मरातब समाज में उनके परिवार की थी वह भी धुंधली हो चली | लोग मुंह पर ही उनका अपमान करने लगे ऐसी विकट परिस्थिति में उन्होंने उनके परिवार में कुलों से चली आ रही भागवत भक्ति का सहारा उन्होंने लिया यह विट्ठल भक्ति या भागवत भक्ति उनके लिए नवीन नहीं थी क्योंकि यह तो पुष्तों से उनके परिवार के संस्कार थे जो उनमें रचे बसे थे इसी मूल को उन्होंने अंतर्ध्यान कर इस मोह माया भरे जंजाल रुपी संसार को छोड़ विट्ठल को आराध्य बना उसकी शोध में निकल पड़े उनकी भक्ति भावना परमोत्कर्षता का अभ्यंग गुण तुकाराम गाथा के अध्ययन से हमें ज्ञात होता है।

## ७.२ श्री विट्ठल भगवान:-

संत तुकाराम की भक्ति भावना को जानने से पूर्व उनके आराध्य श्री विट्ठल भगवान के विषय में सर्वप्रथम जानेंगे। महाराष्ट्र राज्य में विट्ठल भगवान को सभी संत संप्रदाय का और वारकरी संप्रदाय का प्रेरणा स्रोत माना जाता है | पंढरपुर क्षेत्र में विट्ठल मंदिर में विराजित श्री विट्ठल भगवान की मूर्ति बहुत ही सुंदर और शोभनीय है | यहाँ की भक्ति भावना वैष्णव भक्ति कहलाती है और विट्ठल भगवान को अनेक नामों से पुकारा जाता है जैसे- पंढरीनाथ, पंढरीराय, विट्ठलनाथ, विठाई, विठोबा, माऊली, पांडुरंग आदि अनेक नाम है जो मराठी संस्कृति से जुड़े हुए हैं और संत तुकाराम द्वारा रचित पद इतनी ख्याति नाम और सुंदर हैं कि विट्ठल भक्ति का महाराष्ट्र राज्य में कीर्तन भजन आदि हर रूप का वर्णन इनके पदों द्वारा होताहै|

"सुंदर ते ध्यान उभे विटेवरी, कर कटेवरी ठेऊनियां।।१।।
तुलसी हार गळा कासे पितांबर ,आवडे निरंतर हेचि रूप।।ध्रु।।
मकर कुंडले तळपती श्रवणी ।कंठी कौस्तुभ मणि विराजित।।२।।
तुका म्हणे माझे हेचि सर्व सुख ।पाहीन श्री मुख आवडीने ।।३।।"(शा. गा. २)

तुकाराम महाराज द्वारा लिखित उक्त पद विट्ठल भगवान की संपूर्ण रूप उनके द्वारा धारण किए हुए आभूषण वस्त्र आदि जानकारी हमें भली-भांति दे देता है | किस प्रकार विट्ठल भगवान एक ईट पर खड़े हुए हैं कमर पर दोनों हाथ रखे हुए हैं गले में तुलसी की माला पहनी है पीतांबर वस्त्र कमर से लपेटे हुए हैं, गले में तुलसी हार भी धारण किया है, कान में मछली के आकार की कुंडल शोभायमान है और इस पहनावे से उनका रूप सुंदरी की प्रतिमूर्ति है, अनुपम है और विट्ठल भगवान साक्षात विष्णु भगवान के अवतार हैं और बालकृष्ण का रूप है तुकाराम महाराज और सभी संत संप्रदाय इसी रूप में अपने आराध्य को पूजता है और उनकी भक्ति में लीन रहता है।

## ७.३ भक्त पुंडलिक और पंढरपुर

संत तुकाराम की भक्ति भावना को जानने के पूर्व यह जानना आवश्यक है कि महाराष्ट्र में वारकरी संप्रदाय और संतो की भूमि उनके आराध्य विट्ठल और विट्ठल के अनन्य भक्त श्री पुंडलिक के विषय में भी हम ज्ञान प्राप्त करें क्योंकि इन सभी विषयों पर अनभिज्ञ रहकर हम संत तुकाराम के भक्ति में पदों का अध्ययन आधा अधूरा ही कर पाएंगे इसीलिए उनकी भक्ति पराकाष्ठा के अध्ययन के पूर्व उसके प्रमुख स्त्रोत को जानना अति आवश्यक है

**श्री क्षेत्र पंढरपुर:-** पंढरपुर को श्री क्षेत्र पंढरपुर ऐसा कहकर वारकरी संप्रदाय संबोधित करता है | सभी मराठी भक्त कवियों ने पंढरपुर की महिमा का वर्णन उनके काव्य में अनिवार्यतः किया है | पंढरपुर महाराष्ट्र का प्रमुख तीर्थ क्षेत्र माना जाता है यह भीमा नदी के किनारे चंद्राकार आ जाने के कारण नदी के उस भाग को चंद्रभागा कहा गया और इसी चंद्रभागा नदी के तीर पंढरपुर क्षेत्र बसता है इसकी प्राचीनता की ओर यदि हम देखें तो इस क्षेत्र को पांडुरंग पुर और पंढरपुर क्षेत्र के नाम से भी जाना जाता है | इस क्षेत्र का नाम भक्त पुंडलिक के नाम पर पड़ा है | भक्त पुंडलिक पांडुरंग के या विट्ठल के प्रथम भक्त गणे जाते

हैं | मराठी अभ्यासक डॉक्टर भंडारकर ने इस विषय में मराठी तर्क दिया है इसका मैं आपको हिंदी अनुकरण समझा रही हूं।" :- पंढरपुर क्षेत्र को संतो ने अपना मायका माना है | मायके के सम्बोधन के कारण इस क्षेत्र के प्रति उनका लगाव और उनकी गहरी अनुभूति है | जिस प्रकार प्रत्येक स्त्री को मायके से लगाव हमेशा लगा रहता है जब भी उसके मायके की चर्चा, संवाद या नाम मात्र से उसकी आंखों से आनंद अश्रु आ जाते हैं मायके की याद में उसका तन - मन आतुर हो जाता है बिल्कुल वैसे ही भावना संतो के मन में श्री पंढरपुर क्षेत्र का नाम लेने पर होती है यही अनुभूतिपरक चित्रण संत तुकाराम गाथा में भी हमें मिलता है

**"पंढरिये माहे साजणी | ओविये कांडनी गाउँ गीत || १ ||**
**राही रखुमाबाई सत्यभामा माता | पांडुरंग पिता माहियेर** ।।"(शा.गा. १५६८ तुकाराम)

इस प्रकार का वर्णन श्री पंढरपुर क्षेत्र के विषय में यह अभिमत सिर्फ संत तुकाराम का ही नहीं है वरण सभी संत कवि जैसे संत नामदेव, संत ज्ञानेश्वर, संत चोखा मेला आदि संतों का भी इसी के समरूप मत है। वैसे तो भक्ति चित्त स्वरूप होती है कहा जाता है कि ईश्वर की प्राप्ति मनः शक्ति द्वारा भी हो सकती है इसीलिए मराठी संतों ने पंढरपुर को मायके की उपमा दी है क्योंकि एक स्त्री जो आनंद मायके जाकर प्राप्त करती है उस आनंद की अनुभूति कहीं नहीं हो सकती किसी परमार्थ में नहीं यहां तक कि स्वर्ग में भी नहीं इसीलिए मायके का महत्व वहां जाकर ही प्राप्त होता है उसके सिवा कहीं नहीं उसी प्रकार पंढरपुर जाकर ही संतो को विट्ठल दर्शन मात्र से उनका अंतर अंतः बाह्य मन तृप्त हो जाता है उनके जीवन का सर्वानंद पंढरपुर क्षेत्र में जाकर उन्हें मिल जाता है इसीलिए इस क्षेत्र की विशेष महती का गान संत भक्त करते हैं।

**विट्ठल भक्त पुंडलिक**:- विट्ठल भक्त संप्रदाय का प्रवर्तक भक्त पुंडलिक को माना जाता है एक पौराणिक कथा के अनुसार पुंडलिक उनकी पत्नि को बहुत अधिक चाहते थे और अपने माता - पिता को बहुत तुच्छ समझते थे और उनके साथ दुर्व्यवहार करते थे इस अवस्था से परेशान होकर उनके माता-पिता काशी यात्रा के लिए निकल पड़ते हैं और कुछ समय पश्चात अपने पत्नि के आग्रह पर पुंडलिक भी पत्नि को कंधे पर उठाकर काशी यात्रा के लिए निकल पड़ते हैं रास्ते में उनकी भेंट कुक्कुट नामक ऋषि से होती है पुंडलिक ऋषि से माता - पिता की सेवा का फल क्या होता है यह पूछते हैं वे उसे पुत्र धर्म विषयी ज्ञान देते हैं और इसके पश्चात पुंडलिक माता - पिता की सेवा मनोभाव से करते हैं इस सेवा से प्रसन्न हो श्री कृष्ण स्वयं उनसे मिलने के लिए आते हैं लेकिन पुंडलिक उस समय अपने माता पिता की सेवा में तन - मन - धन से व्यस्त रहते हैं | श्रीकृष्ण की ओर कोई ध्यान नहीं देते क्योंकि वह अपने माता पिता की सेवा में कोई भी विघ्न नहीं चाहते और पास में रखी है आगे की ओर सरका देते हैं और कहते हैं इस पर खड़े हो जाइए भगवान श्री कृष्ण उस ईट पर खड़े हो जाते हैं और ईट पर खड़े होने के कारण उन्हें विट्ठल कहा जाता है क्योंकि ईट को मराठी में वीट कहते हैं श्री कृष्णा अर्थात विट्ठल आनंदित होकर दोनों हाथ कमर पर रखें कुंडलिक की माता पिता के लिए की जाने वाली सेवा देखते रहते हैं और उससे खुश होकर उनसे वरदान मांगने को कहते हैं तब कुंडलिक वरदान मांगते हैं कि विट्ठल इसी रूप में ऐसे ही रहे अज्ञानियों को ज्ञान दे, उनका उद्धार करें और पुंडलिक वरद पुंडलिक पुर नाम से प्रसिद्धि प्राप्त करें | उपरांत भगवान उन्हें तथास्तु कहते हैं और इस वरदान के अनुसार पंढरपुर नगरी

में पांडुरंग के मंदिर से 15 सो फुट के अंतर पर पुंडलिक स्वामी का मंदिर है वहां भक्त कुंडलिक की समाधि है आज भी भक्तगण पांडुरंग के दर्शन के पूर्व कुंडलिक के दर्शन करते हैं और सभी संतों की वाणी में कुंडलिक की महिमा को वर्णित किया गया है ।

**"वैकुंठीचा देव आणिला भुतळा । धन्य तो आगळा पुंडलिक ॥१॥"(**शा. गा. ४३०७)

इस पद का तात्पर्य है वैकुंठ धाम से साक्षात देव रूप पृथ्वी पर पधारे हैं भक्त पुंडलिक के कारण धन्य है भक्त पुंडलिक सर्वश्रेष्ठ पुण्यवान है इस प्रकार की वाणी भक्त पुंडलिक को धन्यवाद देती है क्योंकि उनके माध्यम से आज पंढरीनाथ की प्राप्ति संतो को, भक्तों को सुख, ऐश्वर्य, आनंद दे रही है।

भक्त शिरोमणि संत तुकाराम:- जैसा कि हमने संत तुकाराम के संपूर्ण जीवन वृतांत का अध्ययन किया और उसमें देखा कि किस प्रकार एक प्रतिष्ठित और आर्थिक संपन्नता भरे परिवार में संत तुकाराम का जन्म हुआ उनके परिवार में महाजनी, साहूकारी और बनिया व्यवसाय बहुत अच्छे से चल रहा था और साथ ही भजन, पूजन, कीर्तन आदि परंपरा पीढ़ियों से उनके परिवार में संजोए हुए थे ऐसे परिवार में तुकाराम बचपन से ही लिखना पढ़ना और उसके साथ भगवान की भक्ति - भावना आदि संस्कारों से पूरित हो रहे थे | उनके दो विवाह हुए और उनका सांसारिक जीवन सुख से चल रहा था | परंतु भीषण सूखा परिस्थिति मैं उनके सुखी जीवन को झकझोर के रख दिया और उनके व्यवसाय, धंधे, सुख - संपन्नता को भी नष्ट कर दिया | किसी परिस्थिति में उनके अपने भी उनका साथ छोड़ परलोक सिधार चुके थे ऐसे नैराश्य भरे जीवन से संत तुकाराम पूरी तरह से टूट चुके थे लेकिन उनकी इस टूटन का और बिखरने का भाव एक अलग ही चिंतन की ओर उन्हें खींच रहा था वह मनः शांति के मार्ग को खोज रहे थे और इसी मार्ग का चिंतन करते हुए, खोजते हुए अपनी पीढ़ी से चली आ रही वारकरी संप्रदाय और पंढरपुर की वारी का मार्ग अबिलंब करके आगे बढ़ते हैं उनके जीवन का लक्ष्य और ध्यान अब केवल विट्ठल है और कोई नहीं अब उन्हें एकांतवास की ओड़ लग चुकी थी और विट्ठल ध्यान में मगन रहना उनका नित्य कर्म हो गया था संत तुकाराम एकांत में हर पल हर समय विट्ठल का ध्यान करते | विट्ठल भेट के लिए व्याकुल हो जाते वह चाहते थे उन्हें भगवान के दर्शन होंगे तभी उनकी सब चिंता दूर होगी उनसे भेंट हुए बिना वह ऐसे चिंतित ही रहेंगे | तुकाराम मन ही मन सोचते मैं कहां भक्ति में कम कातर हुआ जा रहा हूं कि भगवान मुझे नहीं मिल रहे | वह भक्ति के अधीन भगवान विट्ठल से लड़ते उनसे भेंट की व्याकुलता को दर्शाते कभी उनसे कलह करते इस प्रकार उनके मन की नाना उत्कंठाएँ उनके पद द्वारा व्यक्त होती हैं

"संसारतापे तापलो मी देवा । करिता सेवा या कुटुंबाची ॥१॥
म्हणऊणी तुझे आठविले पाय ।ये वो माझे माय पांडुरंगे ॥ध्रु ॥"(शा. गा. अ. क्र. ९१ )

उक्त अभंग के माध्यम से संत तुकाराम कहते हैं कि इस गृहस्थी,सांसारिकता से अब ऊब गया हूँ| हे ! प्रभु अब मैं दिन रात हर समय आपका चिंतन करता हूँ , आपका ध्यान करता हूँ, आपकी शरण में आया हूँ मेरी माँ पांडुरंग अब मेरा अंत ना देखो मुझे मिलने आ जाओ इस प्रकार संत तुकाराम अपने प्रभु से मिलने के लिए आतुर हैं उन्होंने कई नामों से अपने

आराध्य को संबोधित किया हैं कभी प्रभु को माँ कहते हैं, कभी पिता, कभी बंधु - भ्राता और सर्वस्व उन्हें मानते हैं यह और ऐसे अनेक पदों में विट्ठल के रूप का नाना प्रकार से उनके साथ संबंध जोड़ कर उनकी भक्ति में डूब जाने का वर्णन संत तुकाराम ने किया है।

"तुझे पाय माझे भाळ ।एकत्रता सर्वकाळ ॥१॥
हेचि देई विठा बाई ।पांडुरंगे माझे आई ॥२॥
नाही मोक्ष मुक्ति चाड ।तुझी सेवा लागे गोड ॥३॥
सदा संग सज्जनांचा ।नको वियोग पंढरीचा ॥४॥
नित्य चंद्रभागे स्नान करी क्षेत्र पदक्षण ॥५॥
पुंडलिक पाहोनि दृष्टि ।हर्षे नाचो वाळवण्टी ॥६॥
तुका म्हणे पांडुरंगा ।तुझे स्वरूप चंद्रभागा ॥७॥"(तु. गा. ८८)

इस प्रकार इस पद में भी संत तुकाराम भगवान को भाई कहते हैं, आई (माँ ) कहते हैं कि उनकी सेवा करने से मैं सदा सज्जनों के साथ रहता हूँ सदआचरण करने वालों के साथ रहता हूँ| मुझे पंढरपुर में ही रहना अच्छा लगता है वहां से दूर होना अच्छा नहीं लगता हर रोज चंद्रभागा नदी में स्नान, मंदिर की परिक्रमा और भक्त पुंडलिक को देखता हूँ, हर रोज उन पर दृष्टि पढ़ती है जब मैं पंढरपुर में होता हूँ पंढरपुर में जो चंद्रभागा नदी के पास रेत भरी जमीन है वहां में हर्षोल्लास के साथ भगवान के भजनों को गा गा कर नाचता हूँ संत तुकाराम कहते हैं कि ऐसा करने से उस पवित्र चंद्रभागा नदी में मुझे विट्ठल आपका स्वरूप दिखाई देता है। इस प्रकार विट्ठल भगवान से मिलने की बारंबार आतुरता संत तुकाराम के पदों में व्याप्त है।

तुझे पाय माझे भाळ ।एकत्रता सर्वकाळ ॥१॥
हेचि देई विठा बाई ।पांडुरंगे माझे आई ॥२॥
नाही मोक्ष मुक्ति चाड ।तुझी सेवा लागे गोड ॥३॥
सदा संग सज्जनांचा ।नको वियोग पंढरीचा ॥४॥
नित्य चंद्रभागे स्नान करी क्षेत्र पदक्षण ॥५॥
पुंडलिक पाहोनि दृष्टि ।हर्षे नाचो वाळवण्टी ॥६॥
तुका म्हणे पांडुरंगा ।तुझे स्वरूप चंद्रभागा ॥७॥(तु. गा. ८८)

इस पद में ईश्वर की महिमा का वर्णन करते हुए संत तुकाराम कहते हैं कि ईश्वर कोई जात - पात - धर्म नहीं देखते वह तो सिर्फ भक्तों की भक्ति को देखकर ही उसके कर्म को देखकर उस पर आकृष्ट हो जाते हैं| और उसे साक्षात रुप में दर्शन देते हैं या स्वयं के वहां होने का आभास दिलाते हैं वह भक्तों की हर परेशानी में उसका साथ देते हैं और उसकी भक्ति भावना से खुश जरूर होते हैं और उसे उसका फल भी जरूर देते हैं जैसे उन्होंने विदुर जो कि दासी पुत्र थे उनके घर का अतिथ्य ग्रहण किया, राज महल को छोड़कर राक्षस कुल में जन्मे प्रहलाद का रक्षण किया, रोहिदास के चमड़े को रंग दिया, कबीर के घर शालों की बुनाई की सज्जन कसाई के यहां मांस बेचा, सावता माली के यहां पर खेत की रखवाली का काम किया, नरहरी सोनार के घर उनके साथ जेवर बनाने का काम किया,चौकिया माली के साथ उसके मरे हुए जानवरों की अन्तः विधि करवाई, अर्जुन के सारथी बने, सुदामा के पोहे

खाए, गोप गोपियों के घर गायों की रखवाली की, इस प्रकार सभी भक्तों की समय-समय पर रक्षा की है उनकी भक्ति का फल उन्हें दिया है और भक्त पुंडलिक के कहने पर वह आज भी वैसे ही खड़े हैं | हे !भगवान तुम्हारी माया अपरंपार है, तुम धन्य हो इस प्रकार यहां संत तुकाराम केवल स्वयं की भक्ति का वर्णन ना करते हुए नाना प्रकार के भक्तों के द्वारा उनकी भासित प्रचित्ति के द्वारा यह समझाने का प्रयास कर रहे हैं कि ईश्वर भक्तों के लिए जरूर दौड़े आते हैं लेकिन भक्ति स्वच्छ निश्छल और एकात्म भाव की हो।

तुकाराम महाराज ईश्वर में इतने दिन हो गए थे की वह अपने आराध्य विट्ठल देव के साथ कभी-कभी लड़ाई झगड़े पर भी उतर आते थे यह लड़ाई झगड़ा उनके अंतर्मन का था एकात्मक चित्र से भंडारा नामक पहाड़ पर चढ़कर दिन रात एकांतवास में विट्ठल की आराधना करते उनका ही नाम स्मरण करते हैं उनका यह जब तक बिना विघ्न पड़े दिन-रात चलता रहता अमन उनका मन किसी और काम में लगता ही नहीं लेकिन इधर ईश्वर से मिलन भी नहीं हो रहा था इस उत्कंठा में कई बार वह अपने आराध्य पर खीज उठते उनसे लड पढ़ते उन्हें कभी कभी ईश्वर की भी चिढ़ आने लगती कि मैं इतने सर्वस्व भाव से उनकी भक्ति कर रहा हूं सब कुछ मैंने त्याग दिया है बस ईश्वर का ही नाम स्मरण बाकी है जीवन में अब तो मेरे संयम की परीक्षा हो रही है और मैं अपना धीर खो रहा हूं मेरा विश्वास डगमगा रहा है इस प्रकार ईश्वर पर भी नाराज हो जाते हैं यह वर्णन उनके एक पद में इस प्रकार वर्णित है।

"माझी मज जाती आवरली देवा ।नव्हता या गोवा इंद्रियांचा ॥१॥
कासया मी तुझा म्हणवितो दास ।असतो उदास सर्वभावें ॥२॥
भयाचिये भेणें धरियली कास ।नपुरतां आस काय थोरी ॥३॥
तुका म्हणे आपआपुली जतन ।कैचे थोरपण मग तुम्हां ॥४॥"

संत तुकाराम इस पद के माध्यम से भगवान से कह रहे हैं कि मैंने तेरी मोह माया में पढ़कर इज्जत की मोह माया छोड़ दी अपनी सभी इंद्रियों पर विजय हासिल कर ली और मैं विजयी हूं तो तेरा दास कैसे लेकिन तेरे दर्शन ना देने के कारण मुझे इस संसार से भय लगने लगा है और इस भय के कारण मैंने तेरा हाथ थामे रखा है अब तो तुम मेरी इच्छा पूरी करो मुझे दर्शन दे दो और यदि नहीं दे सकते तो बड़प्पन दिखाने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं है खुद को ऊंचा मानने का भी तुम्हें कोई अधिकार नहीं है इस प्रकार संत तुकाराम नाना भांति से बड़े अधिकार से ईश्वर को भी भला बुरा कह देते हैं और उनसे भी लड़ झगड़ लेते हैं लेकिन उनकी यह लड़ाई उनके मन का अंतर्द्वंद है, विलाप है, तड़प है, बस ईश्वर के दीदार के लिए उसके भास मात्र के लिए |

**ईश्वर का साक्षात्कार:-** सच्चे भक्त की भक्ति आखिर ईश्वर को उससे मिलने के लिए मजबूर कर देती है या ईश्वर भी अपने सच्चे भक्तों से मिले बिना नहीं रह सकते संत तुकाराम महाराज के साथ भी यही हुआ वह दिन आ गया जब वैकुंठ नायक का साक्षात्कार होने लगा उन्होंने विट्ठल भगवान से साक्षात्कार के लिए अभी तक जो उत्कंठा और विफलता दर्शाई वह अब खत्म हो चुकी थी जब ईश्वर स्वयं सामने आते हैं संत तुकाराम को लगता है उनके जीवन की संपूर्ण इच्छा आकांक्षा खत्म हो गई है ना भूख ना प्यास और ना कोई सुख दुख है

क्योंकि अब उनके ईश्वर उनके सामने हैं वह अपने इस आनंद का वर्णन करते हुए कहते हैं कि

"आनंदाचे डोही आनंदतरंग ।आनन्द ची अंग आनन्दाचे ॥१॥
काय सांगो जाले काहिचियाबाही । पुढे चाली नाही आवडीने॥ध्रु ॥
गर्वाचे आवडी मातेचा डोहाळा । तेथींचा जिव्हाडा तेथे बिंबे ॥२॥
तुका म्हणे तसा ओतलासे ठसा ।अनुभव सरिसा ऊत आला ॥३॥"

इस पद के वचन से ही आप समझ गए होंगे कि पूरे पद में आनंद आनंद शब्द की आवृत्ति बहुत बार हुई है प्रभु को सामने देख संत तुकाराम का आनंद उमड़ उमड़ कर बाहर निकल रहा है | उनको कुछ सूझ नहीं रहा है आनंद की उर ऊपर भी आनंद तरंगें उठने की बात संत शिरोमणि कह रहे हैं और आनंद के शरीर पर भी आनंद ही होता है ऐसा उनका मानना है | आनंदित तरंगों के कारण उन्हें इतना सुख मिल रहा है और ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हमेशा यही स्थिति बनी रहे इस क्षण और परिस्थिति में कोई भी बदल ना हो उन्हें यह परिस्थिति कैसी लग रही है जैसे एक गर्भवती स्त्री की सभी खानपान अन्य इच्छाएं उसके परिवार वाले पूर्ण करते हैं उसी प्रकार पांडुरंग मेरी सभी इच्छाओं को पूरा कर रहे हैं इस मिलन से मेरे जीवन की सभी इच्छाएं पूर्ण हो गई, मेरा जीवन सफल हो गया, मैं कृतार्थ हो गया इस मिलन से भवसागर पार कर गया मेरे मन के अंदर की सभी आशा - तृष्णा अब नष्ट हो गई हैं क्योंकि मुझे मेरे ईश्वर मिल गए हैं अब मेरे विश्व के सभी सुख मुझे मिल चुके हैं इस प्रकार उनके द्वारा मिलन का अथाह प्रयास सफल हो गया और एक सामान्य मानव से संत और संत से एक साक्षात्कार ईष्ट का जो भक्ति पंथ था वह अब उन्हें ईश्वर मिलन के पश्चात बहुत आसान जान पड़ा उन्होंने अपने आसपास के समाज को देखा तब उन्हें अनुभव हुआ कि जो भक्ति जनसामान्य कर रहा हैं वह गलत मार्ग अपनाकर कर रहे हैं इसीलिए उन्हें उनकी भक्ति का फल नहीं मिलता तुकाराम का काव्य एक समाज सुधारक का काव्य था | समाज के लोगों के प्रति उनके मन में आस्था थी, प्रेम था और उन्हें अपने ईश्वर मिलन योग की प्रचिती हो चुकी है उनका अपना जीवन सार्थक हो गया है लेकिन अपने साथ समाज का भी उद्धार होना चाहिए और इसीलिए जनहित को ध्यान में रखते हुए उन्होंने भक्ति रस के और भक्ति मार्ग के सभी मार्गों को अपनाकर सभी तत्वों को अपनाकर ईश्वर भक्ति का पाठ समाज के लोगों को पढ़ाया |

## ७.४ संत तुकाराम महाराज के काव्य में सगुण और निर्गुण भक्ति भाव:-

**सगुण भक्ति भाव:-** संत तुकाराम महाराज जैसा कि हम जानते हैं अपने ईश्वर विट्ठल के मिलन हेतु इतने आतुर थे उनकी वह उत्कंठा हमने जानी है उससे हमें यह ज्ञात होता है कि उन्हें उनकी भक्ति सगुण भाव की भक्ति थी उन्होंने ईश्वर के रंग रूप का वर्णन किया है उनसे मिलने पंढरपुर जाने का वर्णन किया है देव के सुंदर स्वरूप और उनके नाम स्मरण,श्रवण पर अधिक बल दिया है उन्होंने अपने इंद्रियों को अपने इश्वर श्री विट्ठल से एक रूप कर लिया इस प्रकार उनकी भक्ति भावना और पदों में सगुण भाव इस प्रकार वर्णित हुआ है |

"अवघ्या दशा येणें साधती ।मुख्य उपासना सगुण भक्ति ।प्रगटे हृदयींची मूर्ति ।भाव शुद्धि जाणोनियां ।।१।।
बीज आणि फळ हरीचे नाम ।सकळ पुण्य सकळ धर्म ।सकळां कळांचे हें वर्म ।

निवारी श्रम सकळही।।२।।"(सा.तु.गा.४०९८)

उक्त पद के द्वारा संत तुकाराम श्री हरि की सगुण रूप की भक्ति को ही उपासना का प्रमुख माध्यम मानते हैं क्योंकि सगुण उपासना भक्ति की सर्व अवस्थाओं को सार्थ्य करती है मानव के मन में सद्भाव को जागृत करती है और हर घड़ी हृदय में श्री हरि की मूर्ति स्थैर्य करती है श्री हरि का नाम ही भक्ति का बीज है और इसका फल भी सर्व सुख से शोभायमान होता है | यही वर्म जीवन मृत्यु का निवारण करता है श्री हरि के यशवंत से, उनके नाम स्मरण से नवरस हमें प्राप्त होते हैं इस प्रकार सगुण भक्ति को प्रमुख मानकर संत तुकाराम सगुण भक्ति विषयक भावों को भक्तों के सामने इस पद के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं |

इस सगुण भक्ति भाव में संत तुकाराम का एक बहुत ही प्रसिद्ध और सुंदर पद है जो विट्ठल भगवान के रंग - रूप उनके श्रंगार का वर्णन करते हैं जो उनकी सगुण भावों की दृढ़ता को व्यक्त करता है ।

"सुंदर ते ध्यान उभे विटेवरी ।कर कटावरी ठेउनियां ।।१।।
तुळसीहार गळा कासे पितांबर ।आवडे निरंतर तेचि रूप ।।२।।
मकर कुंडले तळपति श्रवणी । कंठी कौस्तुभमणी विराजित ।।३।।
तुका म्हणे माझे हे चि सर्व सुख ।पाहीन श्री मुख आवडीने ।।४।।"(सा. तु. गा. पद -१)

इस प्रकार इस पद में संत तुकाराम विट्ठल के रूप का वर्णन करते हैं किस प्रकार उन्होंने कमर पर हाथ रखे हुए हैं मूर्ति अतिशय शोभनीय है, गले में तुलसी की माला पहने हुए हैं, कमर पर पीतांबर वस्त्र लपेटे हुए हैं और कान में मछली के आकार के कुंडल चमक रहे हैं, गले में कौस्तुभ मणि है इस प्रकार के नाना भांति सुंदर और शील वस्तुओं के वर्णन श्री की मूर्ति को कितना सुशोभित कर दिया है इस मनोहारी रूप के दर्शन कर कोई भी धन्य हो जाए इस प्रकार यह और इस प्रकार के अनेकों पद तुकाराम गाथा में हैं जो सगुण भक्ति भाव के पथ प्रदर्शक है ।

## ७. ५ भक्ति का निर्गुण मार्ग:-

संत तुकाराम गाथा में श्री विट्ठल के सगुण रूप सौंदर्य का जितना सुंदर वर्णन मिलता है उतना ही निर्गुण भाव भी तुकाराम गाथा में प्रयुक्त है उन्होंने निर्गुण धारा की ओर भी उपासना भक्ति मार्ग को अवलंबित किया है वे कहते है कि -

"व्यापूनि वेगळे राहिलेसे दूरी । सकळी अंतरी निर्विकार ।।१।।
रूप नाही रेखा नाम ही जयासी ।आपुल्या मानसी शिव ध्याय ।।"(शा. ग. अ. ७०४)

इस पद के अनुसार संत कहते हैं कि विट्ठल की व्याप्ति मन और अंतःकरण में है अंतः करण में उसका कोई रेखा चित्र नहीं है, शारीरिक आकार प्रकार नहीं है और कोई नाम भी नहीं है

यदि है तो परब्रह्म  का ध्यान | वे यह भी कहते हैं ईश्वर की कोई जात नहीं है कोई धर्म नहीं है कोई वर्ण कुल जाति नहीं है और उसका कोई शारीरिक मापदंड भी नहीं है वह तो निराकार परब्रह्म है और उनकी साकार मूर्ति भक्तों को मात्र आकार देने के लिए व्याप्त हुई है जिस प्रकार विज्ञान में द्रव पदार्थ का कोई आकार नहीं होता उसे जिस बर्तन में डालो वह उसी आकार का बन जाता है वैसे ही यह भक्ति है जो भक्तों के हृदय मैं भक्ति भाव को देख ईश्वर उसी आकार में ढल जाते हैं।

संत तुकाराम ने निर्गुण उपासना को मां की ममता के समान माना है जिस प्रकार एक मां का प्रेम हम दिखा नहीं सकते उसकी गणना नहीं कर सकते उसी प्रकार निर्गुण भक्ति का स्वरूप है जिसकी व्याख्या शब्दों में नहीं की जा सकती उसके लिए तो मानसिकता का प्रगल्भ होना आवश्यकहै|

मां का प्रेम हम दिखा नहीं सकते उसकी गणना नहीं कर सकते उसी प्रकार निर्गुण भक्ति का स्वरूप है जिसकी व्याख्या शब्दों में नहीं की जा सकती उसके लिए तो मानसिकता का प्रगल्भ होना आवश्यक है।

## ७.६ नवधा भक्ति

तुकाराम गाथा में प्रयुक्त नवधा भक्ति तुकाराम महाराज की भक्ति का लक्ष्य एक ही था वह था पंढरीनाथ की भेंट, उनका साक्षात्कार और इस साक्षात्कार हेतु उन्होंने सभी प्रकार के भक्ति का मार्ग अपनाया उनमें नाम स्मरण, जप, भजन, कीर्तन, सगुण भक्ति, निर्गुण भक्ति और नवधा भक्ति के 9 प्रकार के साथ सभी भक्ति भाव के प्रकार तुकाराम गाथा ग्रंथ के अध्ययन से हमें ज्ञात होते हैं | प्राचीन शास्त्रों में नवधा भक्ति के नाम के अनुसार ही नो प्रकार बताए गए हैं | कहा जाता है कि जब भक्त इन नो प्रकारों से भगवान की भक्ति पूरे मनो भाव के साथ करता है तो उसे ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है | प्राचीन ग्रंथ, उपनिषद, पुराणों में नवधा भक्ति को इस प्रकार वर्णित किया गया है |

"श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥"

संत तुकाराम महाराजा की भक्ति की अनिवार्यता ईश्वर से साक्षात्कार था | इसीलिए उन्होंने नवधा भक्ति मार्ग को अवलंबित किया और भक्ति की इन कसौटीओं को उन्होंने अपने समर्पण भाव द्वारा भगवान का दास बन शीघ्र ही पार कर लिया | उनके एक पद मैं नवधा भक्ति का वर्णन इस प्रकार उन्होंने किया है |

"अर्चनं वन्दनं नवविधा भक्ति दया क्षमा शांति तये ठायी ॥१॥
तये गावी नाही दुःखाची वसती ।अवघाचि भुति नारायण ॥३॥"

संत तुकाराम के अनुसार श्रवण, कीर्तन, पाद, सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मा निवेदन यह  नौ प्रकार नवधा भक्ति के माने गए हैं इस प्रकार के भक्ति भाव से दया, क्षमा, शांति आदि गुण प्राप्त होते हैं दुखों का नाश होता है यह नौ प्रकार की भक्ति करते हुए

संत तुकाराम ने स्वयं को पांडुरंग का दास माना और अंतःकरण से प्रेम की प्रवृत्ति से भगवान से एकरूप हुए।

१. **श्रवण भक्ति** :- श्रवण का अर्थ होता है परीक्षित यह भक्ति भाव की पहली सीढ़ी मानी जाती है इस भक्ति भाव के द्वारा ईश्वर की लीला,उनसे जुडी कथा, उनके महत्व, शक्ति आदि भाव को संपूर्ण श्रद्धा से निरंतर सुनना श्रवण भक्ति कहलाती है इस भक्ति को करने के लिए भक्तों के पास श्रद्धा और विश्वास की अति आवश्यकता होती है | संत तुकाराम महाराज कहते हैं कि

"आरंभी कीर्तन करी एकादशी। नव्हते आभ्यासी चित्त आधी ॥६॥
काही पाठ केली संतांची उत्तरे ।विश्वासें आदरे करोनिया ॥७॥"(शा. गा. १३३३)

इस पद के द्वारा संत तुकाराम स्वयं का अनुभव वर्णित करते हैं कि जब मैंने विट्ठल भक्ति प्रारंभ की उस समय में महाराज (भगवान के विषय में कथन करने वाले ) के कीर्तन सुनता था, एकादशी का व्रत रखता था लेकिन उस प्रकार की भक्ति अभ्यास गत नहीं थी और उसमें चित्त भी नहीं लगता था मैंने कई संतों के उत्तर याद किए लेकिन उस कार्य के लिए भी विश्वास और श्रद्धा की जरूरत थी तब मुझे समझ में आया भक्ति भाव मन से आना चाहिए देखावा किसी काम का नहीं है | जब हम ईश्वर की कोई कथा सुन रहे होते हैं तो चित्त और श्रद्धा विश्वास उसी में लगा होना | चाहिए जब मन और चित्त से सुनेंगे तभी हमारे अंदर की भक्ति भावना जागृत होगी |

**2. कीर्तन भक्ति**:- कीर्तन का अर्थ होता है शुकदेव इस प्रकार की भक्ति में ईश्वर के गुण, चरित्र, नाम, पराक्रम आदि का उत्साह के साथ कीर्तन करना कीर्तन भक्ति कहलाती है | महाराज तुकाराम को तो कीर्तन भक्ति का सम्राट कहा जाता है कीर्तन का जनक नारद मुनि को माना जाता है | पुरातन काल में इस भक्ति धारा का प्रयोग नारद जी ने समाज की जागृति हेतु किया तभी से यह कीर्तन की प्रथा चलती आ रही है | संत तुकाराम कहते हैं कि मानव जीवन की शांति हेतु कीर्तन के समान कोई दूसरा मार्ग नहीं है उनके अनुसार-

"सोपे वर्म आम्हा सांगितले संती ।टाळ दिंडी हाती घेऊनि नाचा ॥१॥
समाधीचे सुखे सांडा ओवाळून ।ऐसे ही कीर्तन ब्रह्मरस ॥२॥"(शा.गा.१३०४)

तुकाराम का सोपे वर्म से तात्पर्य सबसे आसान और सरलता से है | संत कहते हैं कि कीर्तन के द्वारा हमें समाधान मिलता है | मन को विश्रांति मिलती है और हमारे मस्तिष्क के सभी ताप, शंकाएं इससे नष्ट हो जाती हैं इसीलिए संत कीर्तन को श्रेष्ठ मानते हैं, सरल मानते हैं और इसका आध्यात्मिक परमार्थिक महत्व बारंबार अपने पदों द्वारा हमें बताते हैं।

३. **स्मरण**:- निरंतर ईश्वर का ध्यान करने को स्मरण कहा जाता है ईश्वर की महत्ता और शक्ति का स्मरण कर उसे प्रमुखता देना ही स्मरण भक्ति कहलाती है | तुकाराम गाथा में हमें नाम, संकीर्तन अर्थात स्मरण के महत्व की प्रचित्ति भी दिखती है का यह प्रकार व्यक्ति किसी भी समय किसी भी स्थान पर कर सकता है बस स्मरण अंतर भाव से हो ऐसा तुकाराम महाराज कहते हैं।

"नामसंकीर्तन साधन पै सोपे। जळतील पापे जन्मान्तरे ।।१।।

---

ठायींच बैसोनि करा एक चित्त ।आवडी अंनत आळवावा ।।३।।
रामकृष्ण हरि विठ्ठल केशवा ।मन्त्र हा जपावा सर्वकाळ।।४।।"

भक्ति निर्माण हेतु यह भाव सबसे सरल माना है ईश्वर ने मानव को ऐसी वाणी दी है जिसकी सहायता से वह ईश्वर का नाम स्मरण करें इससे हरि भक्ति का निर्माण होगा क्योंकि भक्ति करने के लिए किसी वस्तु या साधन की आवश्यकता नहीं है सिर्फ साधना की आवश्यकता है।

'एकें रे जणा स्वहिताचा खुणा।
पंढरीचा राणा मनामाजी स्मरावा||"

स्मरण भक्ति को संत तुकाराम भक्तों के हित की भक्ति मानते है | मन के एकांतवास और एकाग्रता से इस भक्ति का फल हमें मिलता है उनके अनुसार मन में हमेशा पांडुरंग का भाव रहे उन्हीं का स्मरण रहे उसी से मानव जीवन तर सकता है ।

**पाद सेवन भक्ति**:- पाद सेवन भक्ति से तात्पर्य आदि श्री लक्ष्मी जी से माना जाता है इस भक्ति में ईश्वर के चरणों का आश्रय लेना उन्हीं को अपना सर्वस्व मानना प्रमुखता से संतों की सेवा, सतगुरु की सेवा और ईश्वर की सेवा पाद सेवन भक्ति कहलाती है इस भक्ति के अंतर्गत तुकाराम महाराज की अपने ईश्वर के प्रति व्यक्तिगत सेवा निष्ठा हमें देखने को मिलती है | श्रवण, कीर्तन, स्मरण से उन्हें तृप्ति नहीं मिली तो वे ईश्वर की चरण सेवा करने लगे इस संदर्भ में उन्होंने कहा है ।

"जाणों नेणों काय चित्ती धरु तुझे पाय |"

**अर्चन भक्ति**:- अर्चन भक्ति से तात्पर्य मन, वचन और कर्म द्वारा पवित्र सामग्री से ईश्वर के चरणों की पूजा करना है | इस भक्ति में मनोभाव से ईश्वर की पूजा कर करना यह पूजा दो प्रकार की होती है | एक प्रतीक पूजा और दूसरा मानस पूजा | पूजा में ईश्वर के रूप देखने का एक भक्त द्वारा प्रयत्न होता है |वह पत्थर, धातु मिट्टी आदि की मूर्ति में ईश्वर रूप को देखता है और उसकी पूजा करता है | वहीं मानस पूजा में मन के भावों द्वारा ईश्वर का अर्चन किया जाता है और यही भावना ईश्वर तक पहुंच जाती है | तुकाराम गाथा में अर्चन भक्ति का वर्णन इस प्रकार है ।

"स्वामिकाज गुरु भक्ति | पितृ वचन सेवापति||१||
हें चि विष्णुची महापूजा | अनुभाव नाही दूजा |ध्रु||"

संत तुकाराम ने अर्चन भक्ति का बहुत सुंदर वर्णन किया है उनके अनुसार स्वामी की सेवा, सदगुरु की भक्ति और पिता की आज्ञा, पति की सेवा यह सभी कार्य अवश्य रूप से करना चाहिए | इन सभी कार्यों को करने से विष्णुजी की महा पूजा का पुण्य मानव को मिलता है | क्योंकि यह संपूर्ण जग ही विष्णु मय है वहीं दूसरी ओर कुछ पदों में अलौकिक पूजा को

आडंबर भी माना है और मानस पूजा को उत्तम स्थान दिया है उनके अनुसार अच्छे कर्मों का फल अच्छा होता है और बुरे कर्मों का फल बुरा होता है इसलिए वे कहते हैं कि सही समाधान तो ईश्वर की भक्ति में है, उसकी पूजा में है इस हेतु कोई आडंबर की आवश्यकता नहीं है यह पूजा मनोभाव से भी हो सकती है कोई दिखावा करने की आवश्यकता नहीं है एक पद में कहते हैं -

"करावी ते पूजा मनेंची उत्तम ।लौकिकाचे काम काय असे।।१।।"

वंदन भक्ति:- वंदन से तात्पर्य है नम्र भाव से नमस्कार करना या सेवा करना ईश्वर को नमस्कार करना मतलब ईश्वर भक्ति और गुरु - माता - पिता अपने से बड़ों को नमस्कार करना उनके प्रति सहृदयता और आदर की भावना को व्यक्त करता है | तुकाराम महाराज ने संतो के चरण स्पर्श करना उनके चरणों पर मस्तक टेकना या साष्टांग नमस्कार को भी वंदन भक्ति माना है ।

"वंदीन मी भूते ।आता अवघिची समस्ते ।।१।।
तुमची करीन भावना ।पदो पदी नारायणा ।।२।।
गाळुनियां भेद प्रमाण तो ऐसा वेद ।।३।।
तुका म्हणे मग नव्हे दुजियाचा संग ।।४।।"

इस पद के द्वारा संत तुकाराम महाराज वंदन भक्ति के भाव को इस प्रकार प्रस्तुत कर रहे हैं कि वह संसार में सभी प्राणी मात्र को वंदन करेंगे | क्योंकि ईश्वर तो घट घट में विराजित है सर्वत्र व्याप्त है यह प्रमाण वेद - पुराण ने भी स्पष्ट किया है | इस विषय की अनुभूति तुकाराम महाराज को हो जाती है तब ऊंच-नीच का भेदभाव यहां किसी भी प्रकार की वैमनस्यता को मन में ना लाकर संसार में सभी प्राणी साक्षात पांडुरंग के रूप हैं |इस जिजीविषा से सभी को वंदन करना सभी का आदर करना और सभी को सम्मान देना संत तुकाराम जी के मतानुसार वंदन भक्ति है | इस भक्ति से व्यक्ति अपने काम क्रोध को शांत कर सकता है । और अपने मनोभाव सद्भाव से ईश्वर को स्वयं में समाहित कर सकता है ।

**दास्य भक्ति**:- दास्य भक्ति से तात्पर्य ईश्वर को स्वामी और स्वयं को दास मानकर परम श्रद्धा के साथ ईश्वर की सेवा करना |दास्य भक्ति कहलाता है नवधा भक्ति में दास्य भक्ति को बहुत महत्व प्रदान है | क्योंकि यह भक्ति अतिशय नम्र और समर्पण भाव की होती है | संत तुकाराम जी ईश्वर के साक्षात्कार हेतु भक्ति के सभी मार्गों का अवलंब किया जब उन्हें लगा कि और मैं क्या कर सकता हूँ | उस समय उन्होंने अपने स्वामी पांडुरंग का दास्यत्व स्वीकार किया और भगवान पांडुरंग की सेवा करने से वे स्वयं को धन्य मानते हैं, आनंदित होते हैं | इसी कारण दास्य भक्ति उन्हें बहुत प्रिय है इस बात का प्रमाण उनके एक पद द्वारा हमें होता है।

"तुमचिये दासींच्या दास करूनि ठेवा ।आशीर्वाद द्यावा हा चि मज ।।१।।
नवविधा काय बोलिली जे भक्ति ।द्यावी माझ्या हाती संतजनी ।।२।।
तुका म्हणे तुमच्या पायांच्या आधारे उतरेन खरें भवनदी ।।३।।"

संत तुकाराम ईश्वर के साक्षात्कार हेतु उनकी दासियों के दास बनने को भी तैयार हैं | वह कहते हैं कि ईश्वर पांडुरंग आप मेरी सेवा स्वीकार करें क्योंकि आपकी सेवा करके ही मैं

नवधा भक्ति पूर्ण कर सकता हूँ और इस जीवन के भवसागर को पार कर सकता हूँ | इस प्रकार की भक्ति करने से मुझे आनंद की प्राप्ति होती है | संत तुकाराम यह भी कहते हैं कि मुझमें दास होने के सभी गुण विद्यमान है।

**सख्य भक्ति**:- ईश्वर को अपना परम मित्र मान सर्वस्व समर्पण कर देना सख्य भाव् की भक्ति है | संत तुकाराम की भक्ति बहुत निराले भाव की थी हर प्रकार से उन्होंने भगवान विट्ठल को प्रसन्न करने का उनके साक्षात्कार का प्रयत्न किया है लेकिन उनकी जो मन की भक्ति लालसा है वह अभी भी अपूर्ण है | अनेक प्रकार से भक्ति तत्वों को आजमा कर भी वे अभी तृप्त नहीं हो पाए और उन्होंने सख्य भक्ति का सहारा लिया ताकि प्रेम स्नेह और आत्मीयता से ईश्वर को पा सके | सख्य भक्ति में संत तुकाराम विट्ठल के मित्र हो गए और अब उनका व्यवहार पांडुरंग के साथ लड़कपन का है | अब वह मित्रता के नाते से बड़े सौहार्द्य भाव से ईश्वर से आराधना करते हैं और कहते हैं।

"कोण आम्हा पुसे सिणलें भागले। तुजविण उगले पांडुरंग ॥१॥
कोणापाशी आम्ही सांगावे सुख दुःख।कोण तहान भूख निवारील ॥ध्रु॥
कोण या तापाचा करील परिहार उत्तरील पार कोण दूजा ॥२॥"

संत तुकाराम महाराज तुझ बिन शब्द का प्रयोग करते हैं इसका अर्थ है तेरे बिना तू तेरे आदि शब्द अपने प्रिय अपने सखा मित्र आदि के लिए प्रयोग में लाये जाते है | तुकाराम कहते हैं कि हे पंढरीनाथ हम इस संसारिक मोह - माया में दिन हो चुके हैं और अब यह सब करते करते हम थक गए हैं यहाँ हमें पूछने वाला कोई नहीं | हम हमारे सुख-दुख किसके साथ बांटे हमारी भूख - प्यास कौन दूर करेगा, हमें लाड प्यार कौन देगा, आप तो सब जानते हो आपसे ज्यादा जिवलग और कोई नहीं है आप तो मेरे जीवलग मित्र हो | सखा हो और इसी सख्य भाव से, बड़े अधिकार से आपसे यह सब कह रहा हूँ | संत तुकाराम को सख्य भक्ति से जो आनंद मिला उससे ज्यादा आनंदित पहले कभी नहीं दिखे उनके सुखों के पारावार की कोई सीमा नहीं रही उन्होंने अपने सांसारिकता की पूर्ण शक्ति छोड़ स्वयं को विट्ठल को समर्पित कर दिया अपने सुख दुख सब उनसे एक रुप कर लिए यही उनकी सख्य भक्ति है।

**आत्म निवेदन भक्ति:-** स्वयं को ईश्वर के चरणों में सदा के लिए समर्पण कर देना कुछ भी अपनी स्वतंत्र सत्ता ना रखने की सबसे उत्तम अवस्था आत्म निवेदन भक्ति मानी गई है | यह भक्ति नवधा भक्ति का आखिरी पड़ाव है निवेदन से तात्पर्य समर्पण से है सर्वस्व अर्पण कर देना ही आत्म निवेदन कहलाता है | इस प्रकार की भक्ति में स्वयं का अस्तित्व शून्य हो जाता है भक्त मुक्ति के मार्ग को चयनित करता है ऐसा करते समय ईश्वर और भक्त समरूप हो जाते हैं नीत - चित्त - दिन के आठों प्रहर सिर्फ ईश्वर और ईश्वर ही विराजमान रहते हैं संसार से कोई भी संपर्क या लेन देन नहीं होता संत तुकाराम महाराज ने बहुत ही सुंदर शब्दों में इस बात को व्यक्त किया है।

"विठ्ठल गीती विठ्ठल चित्ती।विठ्ठल विश्रांती भोग जया ॥१॥
विठ्ठल आसनी विठ्ठल शयनी।विठ्ठल भोजनीं ग्रासोग्रासीं ॥ध्रु॥
विठ्ठल जागृति स्वप्नसुषुप्ति।आन दुजे नेणती विठ्ठलेंविण ॥२॥"
इस पद में हम तुकाराम के अथाह भक्ति भाव को जान सकते हैं वह अपने मुख, चित्त, शयन और जागृत, यहां तक की भोजन के प्रत्येक निवाले में सिर्फ विट्ठल है और कोई नहीं |

विट्ठल उनके स्वर्ण अलंकार है, सुख हैं इस प्रकार विट्ठल संत तुकाराम के हर सांस में हर संकल्प में समाहित हो चुके हैं इस प्रकार भक्ति की यह चरमोत्कर्ष अवस्था में भक्त सहज ईश्वर से समरूप हो जाता है इस प्रकार नवधा भक्ति के सभी रूप तुकाराम गाथा में अध्ययन के पश्चात दृष्टिगत होते दिखते हैं।

## ७. ७ सारांश :-

संत तुकाराम की भक्ति भावना तन - मन - धन से विट्ठल की ओर समर्पित थी इसीलिए उसे नवधा भक्ति में समा लेना बहुत कठिन नहीं था | उनकी भक्ति इन नौ रूपों में बनी नहीं रही वरन इससे कहीं आगे पहुंच चुकी थी तुकाराम गाथा में माधुर्य भाव से श्रंगार भावना उद्भृत होती है अनन्य भाव की भक्ति से भक्ति की पराकाष्ठा को संत तुकाराम ने चित्त और मन ईश्वर को समर्पित कर दिया | इस प्रकार तुकाराम की भक्ति किसी रूप में, तत्व में या नियमों में समाहित हो ऐसी नहीं थी उनकी भक्ति का अथाह सागर असीम था निसार था और अद्भुत था इसीलिए उनके आराध्य भगवान विट्ठल ने उन्हें साक्षात दर्शन दिए और उनका हाथ थाम उन्हें वैकुंठ धाम की ओर ले गए |

## ७. ८ दीर्घोत्तरी प्रश्न:-

१. संत तुकाराम महाराज की भक्ति भाव का वर्णन कीजिए |

२. संत तुकाराम महाराज की भक्ति के निर्गुण और सगुण भाव को उदाहरण सहित समझाइए |

३. संत तुकाराम के काव्य में नवधा भक्ति की परिपूर्ण प्रचीति होती है स्पष्ट कीजिए |

## ७. ९ लघुत्तरी प्रश्न:-

१. संत तुकाराम महाराज के आराध्य ईश्वर कौन है और उनका प्रमुख स्थान है ?

उत्तर - ईश्वर -विट्ठल ,स्थान - पंढरपुर

२. पंढरपुर को श्री क्षेत्र पंढरपुर कहकर कौन संबोधित करता है ?

उत्तर - पंढरपुर को श्री क्षेत्र पंढरपुर ऐसा कहकर वारकरी संप्रदाय संबोधित करता है |

३. विट्ठल भक्त संप्रदाय के प्रवर्तक माने जाते है ?

उत्तर - विट्ठल भक्त संप्रदाय के प्रवर्तक भक्त पुंडलिक को माने जाते है |

४. संत तुकाराम को कहाँ रहना अच्छा लगता है ?

उत्तर - संत तुकाराम को पंढरपुर में ही रहना अच्छा लगता है |

५. स्वयं को ईश्वर के चरणों में सदा के लिए समर्पण कर देना कुछ भी अपनी स्वतंत्र सत्ता ना रखने का भक्ति भाव कौनसे प्रकार की भक्ति है ?

उत्तर - आत्म निवेदन भक्ति

❖❖❖❖

# ८

# संत तुकाराम के काव्य में सामाजिक बोध

**इकाई की रुपरेखा**


८.० इकाई का उद्देश्य

८.१ प्रस्तावना

८.२ लोक गीत व लोक कथाएं

८.३ स्त्री जीवन

८.४ तीज त्योहार का वर्णन

८.५ खेती किसानी व निसर्ग पर्यावरण

८.६ जाति व्यवस्था

८.७ तुकाराम गाथा में तत्कालीन समय के खेल

८.८ सारांश

८.९ दीर्घोत्तरी प्रश्न

८.१० लघुत्तरी प्रश्न


## ८.० इकाई का उद्देश्य

संत तुकाराम के समय की छोटी-छोटी बातें लोकगीत, लोक कथा, उत्सव, त्यौहार छोटे बच्चों के खेल, स्त्री जीवन व स्त्रियों के रोजमर्रा किए जाने वाले कार्य, खेती से संबंधित सभी कार्य, धार्मिक कार्य विधि, मंदिर पूजा -पाठ , शकुन - अपशकुन आदि का वर्णन हमे तुकाराम गाथा में मिलता है | साथ ही समाज का वर्ग विभाजन और उससे उपजी जाती - पाती प्रथा उनके व्यवसाय, कुटुंब व्यवस्था, रिश्ते - नाते आदि तथ्यों का वर्णन हमारे सामने तत्कालीन जीवन का साक्षात दृश्य उपस्थित कर देता है |इसीलिए तुकाराम की वाणी को लोकवाणी कहा जाता है और उन्हें लोग दृष्टा कवि माना जाता है | क्योंकि उनका काव्य एक संपूर्ण समाज के सामाजिक परिवेश का आंकलन करता है | आदि मुद्दों का अध्ययन हम इस इकाई में करेंगे |

## ८.१ प्रस्तावना

जैसा कि हम जानते हैं संत तुकाराम ने तुकाराम गाथा की रचना किसी प्रयोजन से न करके स्वयं निष्ठा और भक्ति की भाव लालसा की प्रचित्ति से हुई थी |संत तुकाराम महाराज के

संपूर्ण जीवन का हमने अध्ययन किया और इस अध्ययन से यह दृष्टिगोचर होता है कि प्रारंभिक जीवन जन सामान्य रहा वे अपने व्यवसाय खेती और घर गृहस्थी में तल्लीन थे | वहीं दूसरी ओर उनके घर में पंढरीनाथ की भक्ति भावना पीढ़ियों से चली आ रही थी | इसीलिए आध्यात्मिक संस्कार भी उन्हें जन्म के साथ ही मिले थे उनका जीवन सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों पहलुओं से फला फूला है | इसीलिए उनका काव्य आत्मीयता और आध्यात्मिकता से जुड़ा है जो सीधे ईश्वर का साक्षात्कार रूप को मनो भावित करता है वहीं सांसारिक जीवन पहले संपन्नता की ओर फिर कष्ट, गरीबी से गुजरा | उनके जीवन में इतने उतार-चढ़ाव आये लेकिन परिवार से मिली आध्यात्मिकता धरोहर की नाल इस सबका संगठित रूप तुकाराम गाथा है | यह सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ समाज के सभी संदर्भों से हमें ज्ञात कराता है इस ग्रंथ में तत्कालीन समय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक परिस्थिति का बोध है | तुकाराम गाथा के अध्ययन से तत्कालीन समय के समाज का दर्पण हमारे सामने मुखरित हो उठता है |

## ८.२ लोक गीत व लोक कथाएं

प्राचीन समाज में मनोरंजन के साधन के रूप में,मन की भावनाओं को व्यक्त करने हेतु या किसी कार्य में तल्लीन होने के उद्देश्य से लोकगीतों का बहुत महत्व था | लोक गीत किसी शुभ समय पर उत्सव त्योहारों आदि के समय या किसी कार्य को करते समय जैसे खेत में धान कटाई,औरतों का चक्की पर धान पिसाई करना आदि अनेक कार्य हैं | जब एक विशिष्ट सुर - लय में गीत गाए जाते थे यह गीत वर्ग विशेष की बोली वाणी के अनुरूप होते थे | इस की महत्ता का वर्णन तुकाराम गाथा में हुआ है | महाराष्ट्र में वासुदेव जोगी, मुंडा, गोंधल, वाघा आदि ऐसे विशिष्ट संप्रदाय हैं जो गीत गाकर अपनी रोजी-रोटी कमाते हैं इन्हीं जनजातियों द्वारा गीतों का वर्णन तुकाराम गाथा में हुआ है जो इस प्रकार है |

**जोगी- जग जोगी जग जोगी। जागे जागे बोलती ।।**

**वासुदेव- मनु राजा एक देहपुरी। असे नांद तू त्यासी दोही नारी ।।**

ऐसे अनेक संप्रदाय हैं जो लोक कथा और लोकगीतों के माध्यम से अपनी रोजी-रोटी कमाते थे यह संप्रदाय अब लुप्त होने की कगार पर हैं कहीं-कहीं इक्का-दुक्का नजर आ जाते हैं।

**कुटुंब व्यवस्था:-** संत तुकाराम स्वयं एकत्र कुटुंब पद्धति से आध्यात्म की ओर आये इसीलिए उनके काव्य में कुटुंब व्यवस्था पर परिपूर्ण चर्चा हुई है तत्कालीन समय में एकत्र कुटुंब व्यवस्था थी उसमें माता - पिता, भाई - बहन उनके परिवार सभी एकत्र मिलजुल कर रहते थे | तुकाराम गाथा में कई पद ऐसे हैं जो कुटुंब के सभी व्यक्तियों को इंगित करते हैं जैसे माता - पिता, पति - पत्नि, काका - काकी, बाल - बच्चे इत्यादि ईश्वर की भक्ति में डूबे संत तुकाराम विठ्ठल को अपना माय - बाप मानते हैं और स्वयं को नन्हा सा बालक उनकी यह भाव धारा पद में इस प्रकार व्यक्त हुई है |

**"नलगे मायेसी बाळ निरवावें ।आपल्या स्वभावें ओढ़े त्यासी।।१।।**
**मज कां लागला करणें विचार । ज्याचा जार भार त्याचे माथां ।।ध्रु।।**

इस प्रकार कुटुंब व्यवस्था के अंतर्गत आने वाले विभिन्न रिश्ते - नाते का वर्णन भी तुकाराम गाथा में हमें मिलता है | रिश्तो में प्रमुखतः माता - पिता, बहन - भाई, पति - पत्नि, काका - काकी आदि रिश्तो का वर्णन है

**"न घड़े मायबाप घात ।आपणादेखत होऊं नेदी।।१।।"**
**"बाळ बापा म्हणे काका।तरी तो कां निपराध।।१।।"**

**"बाळ काय जाणे जीवन उपाय माय बाप वाहे सर्व चिंता।।१।।**
**आइतें भोजन खेळते अंतरी । अंकिता च्या शिरी भारी नाही ।।ध्रु ।।**
**आपुले शरीर रक्षिता न कळे ।सम्भाळुनी लळे पाळी माय ।।३।।**
**तुका म्हणे माझा विठ्ठल जनिता ।आमुचि ती सत्ता तयावरी ।।४।।"**

पद के माध्यम से संत तुकाराम कहते हैं कि मां - बाप की छत्रछाया में जिस प्रकार बच्चे बिन चिंता के बड़े हो जाते हैं वैसे ही ईश्वर की छत्रछाया में भी आसानी से पल बढ़ जाते हैं।

**"कन्या सासूर्यासि जाये । मागे परतोनि पाहे ।।१।।**
**तैसे झाले माझ्या जिवा । केव्हां भेटसी केशवा ।।ध्रु ।।**

उक्त पद में मां - बेटी के सुंदर रिश्ते का वर्णन संत तुकाराम जी ने किया है विठ्ठल भक्ति में उनकी हालत ऐसी है जैसे बेटी मां को छोड़कर ससुराल जाती है पीछे मुड़कर देखती है और सोचती है कि अब कब मिलना होगा उसी प्रकार संत तुकाराम पंढरपुर में अपने ईश्वर विठ्ठल जी के दर्शन करते हैं और निकलते समय पीछे मुड़के देखते हैं और सोचते हैं अब कब मिलना होगा।

सास बहू के सुंदर रिश्ते का वर्णन भी तुकाराम गाथा में है वहीं सौतन का वर्णन भी तुकाराम गाथा में हुआ है जो इस प्रकार है:-

**"परिसें गे सुनेबाई नको वेचूं दूध दहीं ।।१।।**

**"सवती चे चाले खोटे।म्यां जावेसे इला वाटे ।।११।।"**

## ८.३ स्त्री जीवन

भारतीय संस्कृति पुरुष प्रधान रही है लेकिन समाज व्यवस्था और कुटुंब व्यवस्था में स्त्री का स्थान महत्वपूर्ण माना जाता है | संत तुकाराम गाथा में स्त्री जीवन की विविध पहलुओं पर विस्तार से वर्णन हुआ है | तुकाराम गाथा में वर्णित स्त्री कुटुंब वत्सल, सब का आदर करने वाली, गृहस्थी संभालने वाली, रिश्ते - नातों का आदर कर उन्हें संजोने वाली, दो कुलों का उद्धार करने वाली महत्वपूर्ण घटक मानी गई है | तुकाराम गाथा में पतिव्रता स्त्री का वर्णन है वही परित्यक्ता विधवा की परिस्थिति का भी वर्णन हुआ है | संत तुकाराम गाथा में स्त्री जीवन का वर्णन उसके द्वारा घर गृहस्थी में किए जाने वाले छोटे-छोटे कार्यों का वर्णन भी बड़ी कुशलता से किया है इन कार्यों में धान साफ करना, मसाला तैयार करना, कूटना, कृषि संबंधित सभी कार्यों में पति का साथ देना, आदर - आतिथ्य जैसे कार्यों का वर्णन कर उसको समाज और घर के प्रति जवाबदार माना गया है |

**पतिव्रता -** "स्वामी सेवा गोड माते बालकाचें कोड ।।१।।"
**विधवा नारी वर्णन** - "विधवेसीं एक सुत अहर्निशी तेथे चित्त ।।१।।"
**गृहकार्य** - "शुद्धि चे सरोनी भरियेली पाळी ।भारडोनी वोंगळी नाश केला ।।१।।"
"सुपी तोचि आहे तुज ते आधीन ।दळिलिया जेवण जैसे तैसे ।।४।।" "
"शुद्ध त्याचा पाक शुद्ध चित्त चांगला ।अविट त्याला नाश नाही ।।४।।"
'कांडिता कांडण नव्हे भाग शीण ।तुज मज पण निवडे तो ।।४।।'
**गहने परिधान व साज शृंगार का वर्णन** - "वाजती कांकणे अनुहात गजरे ।छन्द माहियेरें गाऊ गीती ।।३।।"

तुकाराम गाथा में स्त्री का वर्णन और उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों का वर्णन भली-भांति विस्तार के साथ हुआ है | संत तुकाराम ने उसके द्वारा किए जाने वाले सभी कार्यों का वर्णन किया है साथ ही उसके श्रंगार का भी वर्णन कुछ पदों में मिलता है जैसे चूड़ी पहनना, गजरा लगाना आदि।

इस प्रकार तत्कालीन स्त्री के श्रृंगार वर्णन के साथ उसके द्वारा किए जाने वाले नित्य कार्यों का भी वर्णन तुकाराम गाथा में हुआ है | तत्कालीन समय में परिस्थिति अनुसार घर की औरतें हर रोज धान साफ करने का उसे पीसने का कार्य करती थी इस कार्य का वर्णन तुकाराम महाराज ने ईश्वर आराधना से जोड़कर किया है जिस प्रकार घर की औरतें जब धान की सफाई करती हैं तो उसमें से भूसा, मिट्टी, कंकड़ - पत्थर आदि को अलग कर देती हैं उसी प्रकार हमारे जीवन से मोह -माया और बुरी आदतों को हमें बाहर कर ईश्वर में लीन होना चाहिए यही जीवन का सदमार्ग है | तत्कालीन समय की स्त्रियाँ अपने हाथ से पत्थर की चक्की से जब धान पीसती थी उस समय वे अपने मायके की याद में गीत गाती थी और गीत गाते समय उनकी चूड़ियों की खनक उस गीत में धुन का काम करती थी और उसी लय में उनके कार्य को विस्तार मिलता था इन शब्दों में संत तुकाराम ने इस प्रसंग को अर्थ दिया है।

**"सावडी कांडण ओवी नारायण ।निवडे आपण भूस सार ।।१।।**
**मुसळ आधारी आवडूनि धरी ।सांवरोनि थोरी घाव घालीं ।।धृ।।" १**

**"करीत शुद्ध दळणाचे सुख सांगो काई ।मानवत असे सईबाई ।।१।।**
**शुद्ध ते वळण लवकरी पावे ।डोलवितां निवे अष्टांग ते ।।२।।"**

**पालना गीत :-** महाराष्ट्र राज्य में पालना गीत की परंपरा सदियों से चली आ रही है यह गीत बच्चे के नामकरण के समय और हर रोज उसे पालने में सुलाते समय माँ गीत गाती है| तुकाराम गाथा में इन गीतों का वर्णन विस्तार से हुआ है वहीं तुकाराम एक भक्त कवि थे इसीलिए उन्होंने पालना गीत में श्री कृष्ण को संबोधित किया है | उनके पालना गीत वर्णन भी अध्यात्म से जुड़े हुए हैं पालना | गीत वर्णन में उनका आशय माता संत रूपी जीवात्मा है और पंचतत्व देह रूपी पालना है और मां अपने छोटे लाड़ले को जब झूला देती है तो तुकाराम उस बालक को उद्देश्य करते हुए आत्म स्वरूप माया का वर्णन करते हैं कि तु इस बाह्य जगत से क्रीड़ा करने में तल्लीन हो गया है और यह काल तुझे ऐसे ही आकर ले

जाएगा तुझे इस बात का पता भी नहीं चलने देगा और तेरा देह जैसे-जैसे बढ़ेगा यह मोह माया तुझे अपना ग्रास बना लेगी इसीलिए तू श्रीहरि का ध्यान कर सावधानी से रहकर अपना जीवन पार कर।

**"जननीयां बाळका रे। घातले पाळणा।**
**पंचतत्त्वी जडीयेला।वारतीया चहूं कोणा।।**
**अखंड जडियेला।तया ढाळ अंगणां।**
**वैखरि धरूनि हाती।भाव दावी खेळणा।।"**

## ८.४ तीज त्योहार का वर्णन

भारतीय लोकजीवन में तीज - त्योहारों का महत्व बहुत अधिक है रोजमर्रा के काम से कुछ अलग करना और इस कार्य में मन को रमा लेना त्योहार मनाने का उद्देश्य होता है तुकाराम गाथा में दिवाली और दशहरे के त्यौहार का प्रमुखता से उल्लेख मिलता है | दिवाली का त्यौहार भारतीय संस्कृति में सर्वोच्च माना जाता है और दशहरे के त्यौहार का महत्व विजय और मुहूर्त की दृष्टि से सर्वोत्तम है | तुकाराम महाराज की भक्ति भावना में संतों की भेंट ही उन्हें दीपावली और दशहरे का भास कराती हैं | जिस प्रकार हर त्यौहार पर महिलाएं अपने मायके जाना चाहती हैं उसी प्रकार संत तुकाराम भी विट्ठल भगवान के दर्शन करना चाहते हैं | और पंढरपुर जाना चाहते हैं | इस बात का वर्णन अपने पदों में वे इस प्रकार करते हैं |

**"दसरा दिवाळी तो चि आम्हां सण। सखे संत जण भेटतील।।"**

**"पवित्र सुदिन उत्तम दिवस दसरा।**

**सापडला तो सादा आजि मुहूर्त बरा।।१।।"**

गौरव गाथा में तीज -त्योहारों के साथ विभिन्न प्रकार के जयंती मनाने, व्रत - उपवास करने विशेष तौर पर एकादशी के व्रत का वर्णन प्रमुखता से किया है | मंदिर, पूजा, अर्चना, पोथी - पुरान, गांव में भरने वाले मेले आदि का वर्णन भी सामाजिक दृष्टि से कितना महत्वपूर्ण है यह दर्शाया गया है।

## ८.५ खेती किसानी व निसर्ग पर्यावरण

तुकाराम महाराज के समय की समाज व्यवस्था में अधिकांश वर्ग की आजीविका खेती किसानी पर आधारित थी इसके अतिरिक्त पालतू पशुओं का पालन पोषण खेती किसानी के कार्य के लिए महत्वपूर्ण माना जाता था | पर्यावरण भी खेती किसानी व्यवस्था से ही संबंधित है तुकाराम महाराज एक व्यवसायी के साथ एक किसान भी थे इसीलिए तुकाराम गाथा में खेती किसानी का प्रदीर्घ वर्णन हमें मिलता है | खेती का काम कितना कष्ट दायी था इस बात का वर्णन भी तुकाराम गाथा में है | संत तुकाराम एक सर्जनशील किसान थे उसके साथ खेती से संबंधित सभी तत्वों का वर्णन तुकाराम गाथा में है जैसे धूप, हवा, बारिश, वृक्ष, पालतू - जानवर और निसर्ग, खेती के प्रकारों की अच्छी जानकारी संत तुकाराम को थी इसीलिए उन्होंने जमीन और खेती से संबंधित अनेक प्रकारों का वर्णन गाथा में किया है |

**"पर्जन्यें पडावें आपल्या स्वभावें ।आपुल्याला दैवें पिके भूमि ।।१।।**
**बीज तेचि फळ येईल शेवटीं ।लाभ हानि तुटी ज्याची दया ।।२।।"**

**"वृक्ष वल्ली आम्हां सोयरीं वनचरें ।पक्षी ही सुस्वरें आळविती ।।१।।**
**येणे सुखे रुचे एकांताचा वास ।नाहीं गुण दोष अंगा येत ।।२।।"**

**"सिंचन करितां मूळ ।वृक्ष ओलावे सकळ ।।१।।**
**नको पृथकाचे भरी । पडों एक मूळ धरीं ।।ध्रु।।"**

**"बीज पेरी सेती । मग गाड़े वरी वाहाती।।"**

तुकाराम गाथा में किसानी के व्यवसाय में मिट्टी, जमीन आदि के वर्णन के साथ सिंचाई के महत्व को भी दर्शाया गया है वही थोड़े से बीज डालने पर गाड़ी भर उपज होती है इसका वर्णन भी गाथा में आध्यात्मिकता के माध्यम से प्रस्तुत हुआ है यहाँ अध्यात्म मानव के शुद्ध आचरण से जोड़ा गया है तुकाराम महाराज कहते हैं कि हमारी थोड़ी सी भक्ति और शुद्ध आचरण हमारे जीवन को अपार संपत्ति दे सकते हैं इस संबंध में कई पद तुकाराम गाथा में वर्णित हैं और सभी प्रकार के वर्णन संत तुकाराम की भक्ति पराकाष्ठा को दर्शाते हैं |

## ८.६ जाति व्यवस्था

तुकाराम गाथा के पदों में विविध जाति वर्ग का उल्लेख मिलता है और जातियों के जो कर्म विशिष्ट हैं वह भी उन्होंने आध्यात्मिक भावार्थ द्वारा हमारे सामने प्रस्तुत किए हैं | संत तुकाराम के समय की तत्कालीन परिस्थिति का चित्र बहुत ही विदारक है वह भी जातिगत माध्यम से इस प्रकार का जातिगत वर्णन अधिकांशतः ग्रामीण भाग से और ग्रामीण भाग की व्यवस्था से जुड़ा हुआ है और उन्होंने इस जाति व्यवस्था का मार्मिक चित्र तो हमारे सामने प्रस्तुत किया ही है साथ में बड़े ही मार्मिक शब्दावली द्वारा उसे घातक भी माना है | तत्कालीन समय की समाज व्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र यह चार वर्ण माने जाते थे | ब्राह्मण उच्च दर्जा प्राप्त वर्ग है | धार्मिक कर्मकांड इसी वर्ग द्वारा किए जाते हैं | इन्हें बुद्धिमानी समझा जाता है और यह बुद्धिमान अहंकार को स्थान देता है इनकी संकुचित वृत्ति को उत्पन्न करता है | संत तुकाराम में इनके द्वारा किए जा रहे कर्मकांड से हो रही हानि का वर्णन किया है और शूद्र वर्ण और उनके कार्यों को भी निचला दर्जा देना इस बात का विरोध भी हमें तुकाराम गाथा में मिलता है | इसी प्रकार क्षत्रिय वर्ण का संबंध राज्य शासन से होता था इन्हे सत्ता धारी समझा जाता था और राज की सुव्यवस्था यही वर्ण चलाता था | तीसरे क्रमांक पर वैश्य वर्ण जिनका आजीविका का साधन व्यवसाय करना होता था जो समाज में जन समुदाय के भरण पोषण का दायित्व निभाते थे | इस प्रकार चारों वर्ण और उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यों का वर्णन तुकाराम गाथा में हमें बहुत ही विस्तार से मिलता है इन सभी वर्णो के विषय में तुकाराम महाराज अपने मत बहुत ही प्रखरता के साथ रखते हैं वही समाज व्यवस्था मैं विभिन्न जातियों का योगदान किस प्रकार है उन जातियों का वर्णन भी तुकाराम गाथा में है |

संत तुकाराम गाथा में समाज व्यवस्था में निहित विभिन्न जातियों का उल्लेख हमें मिलता है उनमें प्रमुखता कुणबी, सुनार, दरवेशी, दारूडी, जोगी, कोल्हाटी, इत्यादि जातियों का वर्णन है संत तुकाराम महाराज स्वयं कुणबी जाति के थे इसीलिए उनके काव्य में कुणबी जाति का और उनके द्वारा किए जाने वाले व्यवसाय का वर्णन विस्तृत दिया गया है |

"कर्म अभिमाने वर्ण अभिमानें | नाडले ब्राह्मण कलयुगी ||३ ||
तैसा नव्हे तुका वाणी व्यवसायी | भाव त्याचा पायीं विठोबाचे || ४ ||"

चारी वर्णे झाले एकचित्रे अंगी | पाप पुण्य भागी विभागिले ||

तुका म्हणे बरी जाति सवे भेटी | नवनीत पोटी साठविले || ४ ||

तुका कुणबियाचा नेणे शास्त्रमत ।एक पंढरीनाथ विसम्बवेना ।।

## ८.७ तुकाराम गाथा में तत्कालीन समय के खेल

यह तो हम जानते ही हैं तुकाराम महाराज सामाजिक जीवन से पूरी तरह जुड़े हुए थे | उनके काव्य में सभी सामाजिक संदर्भ का हमने अध्ययन किया है इस सभी अध्ययन के साथ तत्कालीन समय में बच्चों और बड़ों द्वारा खेले जाने वाले खेलों का वर्णन भी गाथा में विस्तृत रूप में मिलता है इन खेलों में प्रमुख है गुल्ली - डंडा, फुगड़ी, पिपरी, गेंद खेलना आदि |

चेंडू चैगुना खेळती वाळवंटी ।चला चला म्हणती पाहू दृष्टी वो ।।४।।

सारा विटीदान्डू।आणीक कांही खेळ मांडू ।।४।।

फुगड़ी गे अवघे मोड़ी गे। तरीच गोंडी गे संसार तोडी गे।।२।।

## ८.८ सारांश

इस प्रकार हमने अध्ययन किया कि संत तुकाराम वाणी लोकवाणी है और हमारे जीवन से समाज से पूरी तरह अवगत है संत तुकाराम के उपदेश हमें समाज में रहने का सदाचरण का उपदेश देते हैं इनके पदों में अवर्णनीय स्पष्टता है जो जीवन के महत्व का और आचरण का ज्ञान हमें देती है |

## ८.९ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. संत तुकाराम के काव्य में तत्कालीन समय के समाज के दर्शन होते है उदाहरण सहित समझाइए |
२. संत तुकाराम का काव्य समाज सुधार का काव्य है स्पष्ट कीजिए |

## ८.१० लघुत्तरी प्रश्न

१. संत तुकाराम ने स्वयं को किस जाति का कहा है ?
उत्तर – कुणबी

२. संत तुकाराम के समय की समाज व्यवस्था में समाज जातिगत आधार पर कितने वर्ण में बंटा था ?
उत्तर - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र यह चार वर्ण में |

३. संत तुकाराम के समय में बच्चो द्वारा खेले जाने वाले खेलों में तुकाराम कौनसे खेलों का वर्णन किया है ?
उत्तर - गुल्ली - डंडा, फुगड़ी, पिपरी, गेंद खेल आदि

४. "सिंचन करितां मूळ ।वृक्ष ओलावे सकळ ॥१॥
नको पृथकाचे भरी । पडों एक मूळ धरीं ॥ध्रु॥" उक्त दोहे का वर्णन किस क्षेत्र से है ?
उत्तर- खेती – किसानी

५. पालना गीत वर्णन में संत तुकाराम का माता और पालना से आशय क्या है ?
उत्तर - उनका आशय माता संत रूपी जीवात्मा है और पंचतत्व देह रूपी पालना है

❖❖❖❖

# ९

## तुकाराम गाथा प्रेरणादायी स्त्रोत

**इकाई की रुपरेखा**

९.० इकाई का उद्देश्य

९.१ प्रस्तावना

९.२ समाज में समानता

९.३ जातिप्रथा का विरोध

९.४ रीति रीवाज, कर्मकाण्ड का विरोध

९.५ संसार की नश्वरता का वर्णन

९.६ नीति मूल्य

९.७ स्त्री के प्रति उदार दृष्टिकोण

९.८ दहेज प्रथा पर प्रहार

९.९ राष्ट्र भक्ति

९.१० पर्यावरण संवर्धन

९.११ लोकसंख्या वृद्धि पर विचार

९.१२ सन्त तुकाराम महाराज का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

९.१३ सारांश

९.१४ दीर्घोत्तरी प्रश्न

९.१५ लघुत्तरी प्रश्न

९.१६ संदर्भ पुस्तकें

## ९. ० इकाई का उद्देश्य :-

मराठी सन्त कवियो में अग्रणी सन्त तुकाराम ने भागवत भक्ति से परम इष्ट के मिलाप करने तक का अथक प्रयास अपनी गाथा के माध्यम से व्यक्त किया है | साथ ही उनके सुसम्पन्न जीवन से लेकर खडतर जीवन प्रवास में सभी प्रकार के अनुभव उन्हे मिले और उन अनुभवो की प्रणिती उनके काव्य में दृष्टिगोचर होती है, जिसके माध्यम से तत्कालीन समय की अवधारणा तो हमारे सामने प्रस्तुत है ही साथ ही सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक अवस्था कैसे सुचारू रूप से चल सकती है इन क्षेत्रों में व्याप्त कमीयों को नजर अंदाज

करना हमे भविष्य  में क्या परिणाम देगा इस प्रकार की विलक्षण दूर दृष्टि का भी गाथा में वर्णन हुआ है | और इस प्रकार के दिए गए संदेश आज सत्य रूप लिए हमारे सामने प्रस्तुत है | इस प्रकार की भविष्यवाणी सन्त तुकाराम महाराज के स्वभाव के  सर्वज्ञ ज्ञानी, बुद्धिमानी और उनकी प्रगाढ अध्ययन, दूरदर्शित व्यक्तित्व को दर्शाती है –

## ९.१ प्रस्तावना :-

साहित्य लेखन में संपूर्ण संत साहित्य परम्परा का दीर्घ अध्ययन किया जाए तो हमें ज्ञात होता है कि यही समाज सुधार का साहित्य था" सभी सन्त अलग-अलग परिवेश से आये और अपने जीवनानुभव से उन्होने अपनी रचनाओं को सरसता के साथ साथ ज्ञान वर्धक, सहिष्णू, एकता का परिचायक और राष्ट्र के प्रति हित और देशप्रेम की भावना थी इसके अतिरिक्त उनके आधार पर उन्होंने भविष्य के विषय में भाष्य कर और आज उसकी सत्य परिणीती से सभी को आश्चर्य में डाल दिया है | सन्त काव्य की महिमा ही निराली थी जो धर्म के साथ समाज को सुधारने में एक न्यायप्रिय समाज बनाने की ओर बल दे रही थी |

## ९.२ समाज में समानता :

सन्त कवियो ने समाज में भागवत भक्ति का प्रसार किया साथ ही हर मानव के भीतर ईश्वर का अंश माना इसी एक मत ने उनके समाज के प्रति, दृष्टिकोन को हमारे सामने प्रस्तुत कर दिया | सन्त तुकाराम गाथा में कहा है कि सामाजिक समानता ही समाज को सुचारू रूप से आगे ले जा सकती है, क्योंकि समानता निसर्ग द्वारा प्राप्त है और असमानता उसे अनैसर्गिक बनाती है, अर्थात यह मनुष्य की ही देन है | इस संदर्भ में उन्होने शास्त्र, पुराणो और वेद का सहारा लिया है | उनका मानना है कि सभी ग्रंथो में ब्राम्हण, क्षत्रिय, शुद्र और वैश्य को समान अधिकार प्राप्त है | इनमे सामाजिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार की समानताओ का समावेश है |

ऐसा हा निवाडा जालासे पुराणी, नव्हे माझी वाणी पदरीची ||२||

तुका म्हणे आगी लागो थोरपणा | दृष्टि त्या दुर्जनान पदो माझी ||३||

## ९. ३ जातिप्रथा का विरोध :

सन्त तुकाराम ने जाति को न मानकर मनुष्य के गुणों ओर सद्कर्मो को अधिक महत्व दिया है | समाज में फैली इस जाति-गत विषमता से तुकाराम दु:खी थे | इसे उन्होने समाज में स्वार्थी लोगो द्वारा किया गया षड्यंत्र माना है, गाथा में उन्होने कहा है अस्पृश्यता मानने वाले ब्राम्हण का प्रायश्चित देह त्याग करने पर भी नहीं हो सकता | जात-पात यह मानव के स्वार्थी स्वभाव की निष्पत्ति है | परमेश्वर तो सत्य कर्म, सदभाव, सदाचार और सच्ची भक्ति का भूखा है, उसकी नजर में सब समान है, इसीलिए गाथा में उन्होने ईश्वर ने मानव की जात देखकर नहीं उसकी सच्ची भक्ति देखकर भक्त पर कृपा की है | इसके कई उदाहरण संत तुकाराम ने  प्रस्तुत किये है |-

उंचनीच नेणे काही भगवंत | निष्ठे भाव भक्त देखोनिया ||१||

चर्म रंगू लागे रोहिदासा संगी | कबिराचे मागी विणी शेले ||२||

इस प्रकार संत कहते है कि दासी पुत्र विदुर के घर कृष्ण का आतिथ्य स्वीकारना, प्रल्हाद की रक्षा करना, रोहिदास के साथ चमडा रंगने का कार्य और कबीर दासजी के घर कपडे रंगने का कार्य ईश्वर करते है, उनकी जाति के आधार पर नहीं वरन उनकी सत्य, निष्ठा, भक्ति से प्रसन्न हो | ऐसे अनेक उदाहरण गाथा में है जिसके माध्यम से तुकाराम ने जाति विषमता की अवहेलना की है |

## ९.४ रीति रीवाज, कर्मकाण्ड का विरोध :

तत्कालीन समाज में फैली अंधश्रद्धा, कर्मकाण्ड, जादूटोना, दहेज प्रथा, व्यसन ग्रस्त समाज, जप-माला आदि अनेक पहलु जो समाज को गतोर्न्मुखी बना रहे थे | इस सब से तुकाराम समाज को बाहर निकालना चाहते थे |

उन्होने सच्ची भक्ति को ही सही माना और अन्तर्गत बातो को ढोंग माना | कर्मकाण्ड द्वारा अंधश्रद्धा में जकड़े जाना श्रद्धा का नहीं स्वयं ईश्वर का अपमान करना है | तिलक लगाना, जटा बढाकर लोगो फंसाने वालो को तुकाराम के अनुसार कड़ी से कड़ी सजा होना चाहिए

मुखे सांगे ब्रम्हज्ञान | जन लोकाची मान ||१||

ज्ञान सांगतो जनासी | नाही अनुभव आपणासी ||धृ||

कथा करितो देवाची | अंतरी आशा बहू लोभाची ||२||

तुका म्हणे तोचि वेडा | त्याचे हावूनि थोबाड फोडा ||३||

सन्त तुकाराम ने तीर्थ – यात्रा, वृत, अनुष्ठान आदि बातों का भी तीव्र विरोध किया है | और नाम - महिमा को सर्वोपरी माना है | सच्ची भक्ति और मन से ईश्वर को पुकारा जाये तो ईश्वर जरूर आते है |

## ९.५ संसार की नश्वरता का वर्णन :

सन्त तुकाराम का मानना है जिसने जन्म लिया है, उसका मरना अटल है जिस प्रकार बिल्ली चुहे को खा लेती है | उसी प्रकार काल, मानव को हर लेता है | सन्त तुकाराम नीतिज्ञान देते हुए कहते है कि हम इस संसार में आकर सांसारिकता से जुड जाते है | प्रपंच, घर, गृहस्थी में स्वयं को भुला देते है और ईश्वर को भी | इस सांसारिकता में सुख रुपी शहद है जो हमे फूलो में जकडे हुए रखता है | संसार की मोहकता हमे हमेशा आकर्षित करती है, लेकिन यह सत्य है कि संसार नाशवंत है :

लटिका तो प्रपंच | एक हरिनाम साच |

हरिविण आहाच | सर्व इंद्रिये ||१||

लटिके ते मोन | भ्रमाचे स्वप्न |

हरिविण ध्यान | नश्वर आहे ||२||

## ९.६ नीति मूल्य

सामान्य जन मानस लोकरीति, लोकमत व परिस्थितीनुसार चलता है, इसीलिए उसके जीवन में योग्य संगति और नैतिक शिक्षा की आवश्यकता होती है | सन्त तुकाराम कहते है कि मानव को मन प्रसन्न रखना चाहिए, इसी से सुख, समाधान, इच्छा पूर्ति, मोक्ष प्राप्ति होगी |

मानव में कृतज्ञ भाव हमारे अन्दर होना चाहिए हम पश्चिम संस्कृति में बहते जा रहे अंधे बन कर उसका स्वीकार कर रहे है लेकिन यह सब नौटंकी है | यह सुंदर देह ईश्वर ने हमे दिया, खाने को अन्न, रहने को घर मिला इसलिए हमे ईश्वर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए |

कारे नाठविसी कृपाळू देवांसि | पोशितो जगांसि ऐकला तो ||१||

मानव के पास आज जो कुछ भी है उसका अहंकार लेकर वह चल रहा है, मानव के विचारो से वाणी से यदि अहंकार की गंध आ जाती है तो लोग उसे टालने लगते है, सन्त तुकाराम कहते है कि यदि समाज में सम्मान के साथ रहना है तो अहंकार को त्याग दो और जो कुछ है वह ईश्वर की कृपा से है इस सत्य को समझ लो | तभी जीवन अहंकार मुक्त और नम्र होगा, जो निर्वाण के मार्ग पर ले जायगा |

कोडियाचे गोरेपण | तैसे अहंकारी ज्ञान ||१||

त्यासि अंतरी रिझे कोण | जवळी जाता चिक्सवाण ||धृ||

सन्त तुकाराम ने सत्कर्मी व्यक्ती में सहनशीलता के गुण को आवश्यक माना है, यदि एक अच्छे समाज का निर्माण करना है तो प्रारंभिक दौर में उसे समाज की अवहेलना झेलनी पडेगी | और उसे अपने कर्मो पर अडिंग चलना होगा तभी वह ध्येय पूर्ति कर सकेगा |

'मोहरी तोचि अंगे | सूत न जले त्याच्या संगे ||३||

तुका म्हणे तोचि सन्त | सोसी जगाचे आघात ||४||

सन्त तुकाराम का मानना है, संसार सभी प्रकार के व्यक्तियों से बना है – अमीर, गरीब, विद्यावंत, कलावंत, विचारशील आदि लेकिन नम्रता जिसके आचरणो में है वही सर्वत्र सम्मान पाता है |

येत सिंधुच्या लहरी | नम्र होता जाति वरि ||२||

तुका म्हणे कळ | पाय धरिल्या न चले बळ ||३||

अच्छाई की यह गुण सत्य साधक और चित्त को शुद्ध रखने का गुण है | इसमे किसी भी प्रकार का द्वेष नहीं होता | यदि कोई अनुचित घटना हुई भी है तो वह निराश नहीं करती | शांति से स्वीकार कर ईश्वर की इच्छा मान जीवन को आगे भी सदमार्ग की ओर ले जाती है |

सर्वांगी निर्मळ | चित्र जैसे गंगाजळ ||२||

तुका म्हने जाति | ताप दर्शने विश्रांती ||३||

## ९.७ स्त्री के प्रति उदार दृष्टिकोण

सन्त तुकाराम का मानंना था स्त्री भोग की वस्तू नहीं है और समाज में जो इस धारणा से जीते है वे समाज को पतन की ओर ले जाने में सहायक बनते है | तुकाराम गाथा में दहेज प्रथा, शादी-विवाह में अधिक खर्च करना, वर पक्ष की आवभगत करना आदि शिष्टाचारो का विरोध हुआ है, इस विषय में उन्होने कहा है|

'परद्रव्य परनारी | अभिळासूती नक धरी ||१||

जलो तयाचा आचार | व्यर्थ भर वाहे सर ||धृ||

सोहोळ्याची स्थिती | क्रोधे विटाळला चित्ती ||

तुका म्हणे सोंग | दावी बा हेरील रंग ||३||

तुकाराम गाथा २२४५

## ९.८ दहेज प्रथा पर प्रहार:-

जगतगुरु तुकाराम महाराज ने अपने पदों में यह भी कहा है कि कन्या दान को पृथ्वीदान के समान माना है जिस प्रकार पृथ्वी हवा,धूप ,वारिश की चपेट सहन कर भी तटस्थ रहती है | मां के समान अपने बच्चों पर हमेशा दुलारती है उसी प्रकार एक कन्या भी अपने सभी कर्तव्य निभाती है सामने वाला कैसा भी वर्ताव करे पर वह शीलता नहीं छोड़ती इसी कारण पृथ्वी दान और कन्यादान एक समान है |

## ९.९ राष्ट्र भक्ति

सन्त साहित्य समाज सुधार का साहित्य है, समाज सुधार के साथ उनके साहित्य में राष्ट्रहित भी दृष्टिगोचर होता है, उनके द्वारा वर्णित धर्माचरण, सदाचार और नीति संबंधी विचार समाज रक्षण के नाम पर हो रहे ढोंग पाखंड, अनाचार धर्म और देश पर आनेवाले संकट का अन्देशा उनकी तीक्ष्ण बुद्धी ने जान लिया था | संत तुकाराम की धारणा थी राष्ट्र के रक्षण हेतू अधिक से अधिक सैनिको का निर्माण होना चाहिए | तुकाराम महाराज के अभंग (पद) से ज्ञात होता है कि समाज में सिर्फ सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक आन्दोलन न हो वरन राष्ट्र के हित में जनजागृति के आंदोलन होना चाहिए | क्योंकि सन्त तुकाराम के समय मुगल साम्राज्य और मुगल राजाओं के अत्याचार से जन जन तृस्त था | इसीलिए इन्होने पाईक की रचना की जो शिवाजी महाराज व उनके सौ सैनिको के लिए थी |

## ९.१० पर्यावरण संवर्धन

आज का समाज तकनीकि प्रगति का समाज है | इसके माध्यम से मानव ने दिन दुगुनी रात चौगुनी प्रगति की है | ऐसे में पर्यावरण के साथ समतोल रखना बहुत जरुरी है, क्योंकी मानव की प्रगति पर्यावरण और निसर्ग को अनदेखा कर रही है | पर्यावरण का बदलता रु ख इन्सान की प्रगति क्षण में नष्ट करने की ताकत रखता है | यदि हम पर्यावरण के सानिध्य में रहेंगे तो शुद्ध, सुदृढ, सुखी, आरोग्यदायी और आनंदित रहेंगे यह धारणा तुकाराम गाथा में व्यक्त हुई है :

वृक्षवल्ली आम्हा सोयरे वनचरी | पक्षीही सुस्तरे आळविती |

इस प्रकार पर्यावरण रक्षण वृक्ष तोडने से पक्षी - पशु - प्राणी नष्ट होते जा रहे है, मानव जीवन के भौतिक आध्यात्मिक सुख हेतु निसर्ग का महत्व को संत तुकाराम ने शब्दो के माध्यम से अभिव्यक्त कर हमें सीख दी है

## ९.११ लोकसंख्या वृद्धि पर विचार :

आज हमारे देश में कई विकट प्रश्न है तो वह है जनसंख्या वृद्धि तुकाराम गाथा में इस महत्व पूर्ण विषय पर भाष्य कर भविष्य की समस्या को पहले ही भाँप लिया था |

जनसंख्या जिस हिसाब से बढ रही है, वह आगे चलकर जमीन, उद्योग धंदे, खाद्य पदार्थ आदि क्षेत्रो में हलचल मचा देगी और यह वजह युद्ध का कारण बनेगी वे कहते है :

काय पौरे जाली फार | किंवा न साहे करकर |

तुकाराम महाराज कहते है कि घर में अधिक बच्चे होने से अधिकांश समय आपस में लडने, मारामारी और किरकिर में बीतता है वहीं अधिक बच्चे होने से खान-पान, वस्त्र, निवारा आदि सुविधाओ में भी कमतरता बनी रहती है |

## ९.१२ सन्त तुकाराम महाराज का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

आज विज्ञान का युग है सभी देशो ने नये नये शोध लगा लिए है सुविधाए और भी सुलभ करने के लिए शोध मोहिम जारी है | चीन, जापान आदि देश शोध कार्य के लिए प्रथम क्रमांक पर है, वही हमारे देश में शोध कार्य नगण्य के बराबर है | सन्त तुकाराम तत्वज्ञान के द्वारा कहना चाहते है कि विज्ञान चमत्कार नहीं है | वह हमारे अथक प्रयासो की फलश्रुति होता है | हमारे प्रयत्न इस क्षेत्र में होना चाहिए |

दद्धीमाजी लोणी जावती सकाळ | ते काढी निराळे जाणे मथन ||

अर्थात दूध से दही तैयार होता है और दही में मक्खन होता है | यह सभी को ज्ञात है, लेकीन दही से मक्खन बनाने की प्रक्रिया किसी को पता नहीं होती | यह प्रक्रिया जिसने देखी है | वही यह कार्य कर सकता है | एक और उदाहरण देते हुए संत कहते है कि - लकडी से अग्नि का निर्माण होता है यह सभी को ज्ञात है लेकिन अग्नि निर्माण के लिए

घर्षण की प्रकिया का ज्ञान सभी को नहीं होता और यह ज्ञान यदि है भी तो प्रयत्न करना अनिवार्य है |

## ९.१३ सारांश :-

संत तुकाराम का साहित्य स्वांत सुखाय और परान्त सुखाय दोनों उद्देश्य की पूर्ति करने के साथ समाज की भीषणता को देखकर उस विषय में भी सुधार की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है | उनकी विद्वतता की प्रचीति आज उनके भक्तो को हो रही है जब उनके द्वारा दिए गए उपदेश और भविष्य के विषय में उदगार सही साबित हो रहे है | जो सभी के हित में है | इन सभी मुद्दों का अध्ययन हमने इस इकाई में किया है |

## ९.१४ दीर्घोत्तरी प्रश्न :-

१. संत तुकाराम का काव्य समाज के लिए और मानव मात्र के लिए प्रेरणा स्त्रोत है विवरण सहित समझाइए |

२. तुकाराम गाथा में समाज हित और राष्ट्र हित नीहित है | समझाइए |

## ९. १५ लघुत्तरी प्रश्न :-

१. संत तुकाराम गाथा में शास्त्र, पुराणो और वेद आदि सभी ग्रंथो में ब्राम्हण, क्षत्रिय, शुद्र और वैश्य वर्ण को कैसा अधिकार प्राप्त है ?

**उत्तर** - शास्त्र, पुराणो और वेद आदि सभी ग्रंथो में ब्राम्हण, क्षत्रिय, शुद्र और वैश्य को समान अधिकार प्राप्त है |

२. सन्त तुकाराम ने तीर्थ – यात्रा, वृत, अनुष्ठान आदि बातों का तीव्र विरोध कर किस प्रकार की भक्ति को श्रेष्ठ माना है ?

**उत्तर** - सन्त तुकाराम ने तीर्थ – यात्रा, वृत, अनुष्ठान आदि बातों का तीव्र विरोध कर नाम - महिमा को सर्वोपरी माना है | सच्ची भक्ति और मन से ईश्वर को पुकारा जाये तो ईश्वर जरूर आते है |

३. सन्त तुकाराम के अनुसार यदि समाज में सम्मान के साथ रहना है तो क्या करना होगा ?

**उत्तर** - सन्त तुकाराम कहते है कि यदि समाज में सम्मान के साथ रहना है तो अहंकार को त्याग दो और जो कुछ है वह ईश्वर की कृपा से है इस सत्य को समझ ना होगा |

४. सन्त तुकाराम के अनुसार संसार कैसे व्यक्तियों से बना है ?

**उत्तर** - सन्त तुकाराम का मानना है, संसार सभी प्रकार के व्यक्तियों से बना है ?

५. संत तुकाराम ने राष्ट्र के रक्षण हेतू किसकी निर्मिति आवश्यक मानी ?

**उत्तर** - संत तुकाराम की धारणा थी राष्ट्र के रक्षण हेतू अधिक से अधिक सैनिको का निर्माण होना चाहिए |

## ९.१६ संदर्भ पुस्तकें

१) सार्थ श्री तुकारामाची गाथा |

२) मराठी का भक्ति साहित्य - डॉ. भी गो. देशपांडे |

३) मराठी संतो की हिन्दी वाणी - डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित |

४) पाँच संत कवि - श्री. शं. गो. तुलपुले.

❖❖❖❖